ऋषि प्रसाद

सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है।

द्विमासिक वर्ष : २ अंक : २ सितम्बर-अक्तूबर १९९२

ऋषि प्रसाद

सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है।

वर्ष : २

अंक : २

सितम्बर - अक्तूबर १९९२

तंत्री : के. आर. पटेल

शुल्क वार्षिक : रु. २२
त्रिवार्षिक : रु. ६०
परदेश में वार्षिक : US $ ११ (डॉलर)
त्रिवार्षिक : US $ ३० (डॉलर)

* कार्यालय *

'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५
फोन : ४८६३१०, ४८६७०२

परदेश में शुल्क भरने का पता :
International Yoga Vedanta Seva Samiti
8 Williams Crest,
Park Ridge, N.J. 07656 U.S.A.
Phone : (201) - 930 - 9195

टाईप सेटींग : फोटोटेक्स्ट.
प्रकाशक और मुद्रक : श्री के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती,
अहमदाबाद-३८० ००५ ने
अंकुर ऑफसेट, गोमतीपुर, अहमदाबाद में छापकर प्रकाशित किया।

'ऋषि प्रसाद' हर दो महीने में ९ वीं तारीख को प्रकाशित होता है।

जीवन में जानने योग्य वस्तु क्या है ? जानने योग्य वह है जो सबको जानता है । हमारा धर्म, आचार-विचार, संस्कृति, वर्णव्यवस्था और इतिहास भी हमें उसी ओर धक्के देकर भी प्रयोजित कर रहे हैं । हमारे उत्सव भी हमें वही एक अनंत भगवत् तत्त्व की प्रेरणा देते हैं, जो सबके रोम-रोम में चेतना देनेवाला है ।

रक्षाबंधन हमें भाई-बहन के निःस्वार्थ प्रेम का संदेश देता है । जन्माष्टमी श्रीकृष्ण की माधुर्यलीला का रसास्वाद कराती है । गणेशचतुर्थी भी 'गणपति दादा मोरीया लड्डू लाओ साकरिया' की आवाजों के साथ बीतती है । गुरुपूर्णिमा से लेकर ऋषिपंचमी तक त्यौहारों की एक शृंखला चलती है । उन सबका अभिप्राय हमारी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक स्थिति के विकास के साथ साथ हमें जानने योग्य तत्त्व जो सबको जान रहा है उसकी ओर इशारा देने का है ।

'ऋषि प्रसाद' के इस अंक में परंपरागत विभागों के उपरांत 'साधकों के प्रति पूज्यश्री का उपदेश... दूरदर्शन पर पूज्यश्री की मुलाकात... चिन्तकों के प्रश्न एवं पूज्यश्री के सहज स्वाभाविक परमात्म-प्रेरणा से स्फुरित राष्ट्रोपयोगी उत्तर... शरद ऋतु में दूध का प्रयोग क्यों और कैसे... अपना भाग्य अपने हाथों में... आदि विभिन्न बहुआयामी लेखों के साथ मुख्य उद्देश्य जानने योग्य क्या है उसका भी प्रतिपादन अनोखी शैली से हुआ है । इसके साथ यह सत्संग प्रसाद... 'ऋषि प्रसाद' अंक आप के हाथों में प्रस्तुत है...

विनीत
श्री योग वेदान्त सेवा समिति

*

कितने दिन... ?

मानव ! सोचो जग के सुख का,
विस्तार रहेगा कितने दिन ?
सत्कार रहेगा कितने दिन ?
यह प्यार रहेगा कितने दिन ?
चाहे पितु हो या माता हो,
पत्नी हो सुत या भ्राता हो ।
जिसको अपना कहते उस पर,
अधिकार रहेगा कितने दिन ?
कोई आता कोई जाता सबसे,
थोड़े दिन का नाता है ।
जिसका भी आश्रय लेते वह,
आधार रहेगा कितने दिन ?
जो जग में सच्चे ज्ञानी हैं,
परमात्मा तत्त्व के ध्यानी हैं ।
उनसे पूछो मन का माना,
संसार रहेगा कितने दिन ?
तुम प्रेम करो अविनाशी से,
मिल जाओ सब उर वासी से ।
हे पथिक ! यहाँ 'मैं-मेरा' का
व्यापार रहेगा कितने दिन ?

*

देखो, तुम्हारे पास अनावश्यक वस्तुएँ कितनी हैं ? उनके बिना यदि संसार के बहुत-से प्राणी दुःखी हैं, तो तुम्हें क्या अधिकार है कि तुम उन्हें अपने पास रखकर सड़ाओ ? उचित तो यह है कि तुम अपनी आवश्यकता का विचार किये बिना ही दूसरों की आवश्यकता पूरी कर दो ।

वेद मंजरी

परि चिन्मर्तो द्रविणं ममन्याद्
ऋतस्य पथा नमसा विवासेत् ।
उतस्वेन क्रतुना संवेदत
श्रेयांसं ददां मनसा जगृभ्यात् ॥

'मनुष्य बल और धन को निश्चय ही प्राप्त करना चाहे । वह सत्य के मार्ग से नमर्न के साथ पूजा करे और अपनी ही अंतरात्मा से अनुकूलता स्थापित करे । श्रेयस्कर, सबल त्वरित निर्णय को मन से ग्रहण करे ।'

(ऋग्वेद : १०-३१-२)

मनुष्य बल को प्राप्त करे। परंतु वह बल कैसा हो? निश्चय ही वह बल ऐसा हो जो निर्बल की रक्षा में काम आये। मनुष्य अपने शारीरिक, मानसिक, आत्मिक बल का विकास करे। शारीरिक बल को समाज की सेवा में लगाये। उसका ऐसा बल निर्दोष, निःसहाय को पीड़ा देनेवाला न हो, बल्कि उसकी रक्षा करनेवाला हो।

मानसिक बल का विकास कर हताशा, निराशा को दूर भगाओ और आत्मिक बल का विकास कर इसी जीवन में अंतरात्मा परमात्मा से मुलाकात कर लो। अपने को कभी दीन, हीन निर्बल न मानो। निर्बल शरीर हो सकता है, तुम नहीं। प्रतिकूल परिस्थितियाँ हो सकती हैं, तुम खुद अपने आप में प्रतिकूलता को स्थान मत दो। तुम ऐसी जगह पर अडिग अटल रहो।

जो तुम्हारे घट में है वही बाहर है। जो परमात्मा तुम्हारी साँसों को चलाता है, वह हर पुतली को नाच नचाता है। प्राणीमात्र में विराजमान उस प्राणेश्वर को सबमें देखते हुए उसका सर्वात्मभाव से नमनपूर्वक पूजन करो। भगवान श्रीराम के गुरु महर्षि वशिष्ठजी कहते हैं :

येन केन प्रकारेण यस्यकस्यापि देहिनः ।
संतोषं जनयेत् राम तदेवेश्वरपूजनम् ॥

किसी भी प्रकार से जिस किसी भी देहधारी को संतोष प्रदान करना यह परमात्मा का पूजन है। किसी के भी दिल को ठेस पहुँचे ऐसी रुष्ट, कठोर वाणी का प्रयोग न करो। अपनी वाणी, वर्तन व्यवहार से किसीको दुःख न पहुँचे इसका ख्याल करो।

अपने अंतःस्थ परमात्मा की आवाज की अवहेलना कभी न हो। परमात्मा अंतर्यामी साक्षीस्वरूप से सबके दिल में बैठा है। तुम्हारे निर्णय, कार्य, भावना के साथ वह संमति और असंमति का स्वर देता है। उसके उस स्वर को समझो और उसके मुताबिक कार्य करो। ईश-कोप या प्रारब्ध को दोष देने की आदत निकाल दो। तुम खुद अपने भाग्य के आप विधाता हो। तुम चाहो तो अपने दुःखी प्रारब्ध को बदल सकते हो। तुममें अगर कम बल है, कम बुद्धि है तो बल के सागर, बुद्धि के पुंज परमात्मा और परमात्म-स्वरूप संत, सद्गुरु के शरण में जाओ। उनकी बुद्धि से, उनके दिल से अपना दिल मिलाओ। उनके अनुभव से तुम्हारा अनुभव मिलेगा तभी सच्ची शाश्वत शांति मिलेगी। उनके कल्याणकारी वचनों को तत्परता से ग्रहण करो।

कर्त्तव्यपरायणता की राह पर आगे बढ़ो, विषय-विलास-विकारों से दूर रहकर जीवन-पथ पर उत्साह, उमंग से कदम बढ़ाओ। जप, ध्यान करो। सद्गुरु के सहयोग से सुषुप्त शक्तियों को जगाओ। कब तक दीन-हीन, अशांत होकर तनाव में तनते रहोगे?

बल, धन और मुक्ति को सच्चाई और पुरुषार्थ से अवश्य प्राप्त करो।

*

भागवत - अमृत

सर्वतो मनसो असंगो आदौ संगं च साधुषु ।
दया मैत्री प्रश्रयं च भूतेष्वद्धायथोचितम् ॥

'साधक को विषय-विकारों से मन को विरक्त करना, सत्पुरुषों का संग करना, प्राणियों के प्रति निष्कपट रूप से यथायोग्य दया, मैत्री और विनय करना चाहिए।'

(श्रीमद् भागवत् : ११.३.२३)

साधक को सब विषयों से मन को विरक्त करना चाहिए। साधक का लक्ष्य होता है परमात्मा।

साध्यन्ते परम कार्यं इति साधुः ।

साधक का लक्ष्य बहुत ऊँचा होता है। साधक अपने एक एक श्वास का मूल्य समझता है। अपनी हर चेष्टा का यथोचित मूल्यांकन करता है। जिसके जीवन में अपने समय का, जीवन का मूल्य नहीं, जिसके जीवन की कोई उच्च दिशा नहीं, जिसके जीवन का कोई उच्च लक्ष्य नहीं, उसका जीवन बिना स्टीयरींग की गाड़ी जैसा हो जायेगा, छिन्न विछिन्न हो जायेगा, बिखर जायेगा।

भगवान श्रीकृष्ण यहाँ कहते हैं :

साधक को सब विषयों से मन को विरक्त करना चाहिए। विषय-विकार हमारी जीवन-शक्ति का ह्रास कर देते हैं। बाहर के विकारी आकर्षण हमें आत्मघाती बना देते हैं। बाहर के सुख का आकर्षण हमें अपनी सहज सुखद अवस्था से दूर रखते हैं।

'कोख में बेटा शहर में ढिंढोरा।'

सुख तो अपना आत्म-स्वरूप है। मुक्ति तो अपने निकट की चीज है फिर भी आज तक नहीं प्राप्त हुई क्योंकि अभागे विषय विकारों ने हमें आकर्षित किया हुआ है। आँखों को कितना ही दिखाया लेकिन आज तक तृप्ति नहीं हुई। कानों को कितने ही गाने सुनाये लेकिन उन कानों के द्वारा तृप्ति आज तक न हुई। नाक के इन दो छिद्रों को बहुत कुछ सुँघाया लेकिन सूँघने का लालच न मिटा। जीभ को हलवाई की दुकान की मिठाइयाँ खिलाई, चरपरे रायते खिलाये, नमकीन खिलाये लेकिन इस जीभ ने भी हमें शांति न दी। त्वचा को कई जगहों का स्पर्श कराया, कोमल गद्दियों पर, बच्चों को स्नेह से पुचकारने में, पति-पत्नी के व्यवहार में भी... लेकिन उससे कोई शांति या तृप्ति नहीं मिली। इसलिए साधक को चाहिए कि सब विषयों से मन को खींच ले। इससे मनःशक्ति बढ़ती है।

जिसके जीवन में अपने समय का, जीवन का मूल्य नहीं, जिसके जीवन की कोई उच्च दिशा नहीं, जिसके जीवन का कोई उच्च लक्ष्य नहीं, उसका जीवन बिना स्टीयरींग की गाड़ी जैसा हो जायेगा।

विषयी पामर आदमी का मन होता है पीपल के पत्ते जैसा। कुछ देखा, कुछ सुना, कुछ सूँघा तो उधर की ओर आकर्षित हुआ, आसक्त हुआ।

तुलसीदासजी महाराज ऐसे लोगों को सावधान करते हुए कहते हैं :

अलि पतंग मृग मीन गज एक एक रस आँच ।
तुलसी तिनकी कौन गति जा को व्यापे पाँच ॥

भँवरे में बाँस चीर कर बाहर निकलने की ताकत

है। वह रस लेने कमल में जाता है, सुगन्धि लेता है। शाम होती है तो कमल बन्द हो जाता है। भँवरा सोचता है : 'अभी जाता हूँ... अभी जाता हूँ। कमल बन्द हो गया? कोई बात नहीं। सुबह होगी, सूर्योदय होगा, कमल पुनः खुल जायेगा और मैं उड़ जाऊँगा।' ऐसा सोचकर भ्रमर वहीं पड़ा रहता है। रात्रि में ही जंगली हाथी आकर कमलों को तोड़कर पैरों तले कुचल डालते हैं। एक नाक को मजा दिलाने के लिए भँवरा अपनी जान खो बैठता है। हालांकि भँवरा कमल को भेदकर बाहर आ सकता है। मगर सुगन्ध के चक्कर में वह उस कोमल कमल का भेदन नहीं कर पाता और उसीमें मर जाता है।

सुख तो अपना आत्म-स्वरूप है। मुक्ति तो अपने निकट की चीज है फिर भी आज तक नहीं प्राप्त हुई क्योंकि अभागे विषय-विकारों ने हमें आकर्षित किया हुआ है।

मछली तब तक स्वतंत्र है जब तक काँटे में पड़े हुए स्वादिष्ट पदार्थ के पीछे पगली नहीं हुई। काँटे में पड़ा हुआ स्वाद लेने जाती है और फँसकर तड़प-तड़प कर मरती है।

हाथी बड़ा बलवान प्राणी होता है। शिकारी लोग जंगलों में घास-फूस की हथिनी बनाते हैं। बड़े खड्डे को घास-फूस से ढककर उस पर उस हथिनी को खड़ी कर देते हैं। हथिनी को देखकर हाथी उन्मत्त होकर, हथिनी का स्पर्श-सुख लेने जाता है और खड्ड़े में गिर पड़ता है। महावत आता है, उसे बाँधता है, पीटता है। इतना बड़ा हाथी एक छोटे-से आदमी का हुक्म मानकर अपनी पूरी जिंदगी बंधन में बिताता है।

पतंग दीये का दृश्यसुख लेने जाता है और दीये की जरा-सी गर्मी लगते ही गिर पड़ता है। फिर भी सावधान नहीं होता। थोड़ा स्वस्थ होते ही फिर जाता है, गिरता है, फिर उठता है। जब तक अपना विनाश नहीं कर लेता तब तक छटपटाता हुआ बार-बार दीये में झुलसता है, जलता है और आखिर में मरता है। क्योंकि उसे देखने का आकर्षण है।

भँवरा कमल को भेदकर बाहर आ सकता है। मगर सुगन्ध के चक्कर में वह उस कोमल कमल का भेदन नहीं कर पाता और उसी में मर जाता है।

मृग शब्द सुनने की तान में गुलतान होकर संगीत सुनने खड़ा रहता है और शिकारी के बाण का शिकार बन जाता है।

ऐसे ही, जो असाधक मनुष्य हैं वे जब तक मौत नहीं पटकती तब तक वही शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध में अपने को जलाते रहते हैं। मनुष्य फिर-फिर से वही काम करता है, जो काम करने के बाद पश्चात्ताप हो। भोग भोगने से निस्तेज हो गये, शक्तिहीनता, पराधीनता और रुग्णता आयी, ऐसा अनुभव किया फिर भी अपने को उसीमें पटकता है। ऐसे लोगों का मन होता है पीपल के पत्ते जैसा। जरा-सा कोई विषय मिला, जरा-सी भेलपुरी की सुगन्ध आयी तो जेब में हाथ डाला पैसा निकालने को। पेट भरा है मगर स्वाद के लिए भेलपुरी खा ली।

भोजन किया है। निकले घूमने को। चलो पौंक की सीझन है, पौंक खाया। खाने के ऊपर दुबारा खाया... फिर एसीडीटी होगी।

पौंक खाओ, उसकी मना नहीं है। मगर कब खाना, कितना खाना, कैसे खाना इसका विवेक करो। वायु प्रकृति हो और जुवार का पौंक खाओ। ऊपर से मीठे दाने खाओ टेस्ट के लिए। 'बहुत अच्छा लगता है।' दो दिन के बाद कहोगे कि : 'मुझे किसीने कुछ कर दिया है। भोजन अच्छा नहीं लगता, भूख नहीं लगती।' भूख कैसे लगेगी? अजीर्ण हुआ है।

खाने-पीने की मना नहीं है मगर स्वाद में बँध जाना, उसमें लंपट हो जाना यह ठीक नहीं। चीज का उपयोग करो लेकिन उसके भोगी मत बनो। इन्द्रियों का उपयोग करो, इन्द्रियों के भोग मत बनो।

बुद्धिमान आदमी दीये का उपयोग करता है, जबकि पतंग दीये का भोग बन जाता है। बुद्धिमान

आदमी कान का उपयोग करता है, कथा-श्रवण करता है, सारभूत शब्द-श्रवण करता है लेकिन बुद्धू आदमी कान का भोग बन जाता है।

जीवन को इतना तुच्छ न बनाओ कि बस, कोई भी दृश्य तुम्हें खींच ले। फिल्म का पोस्टर देखा और मन में हुआ कि यह फिल्म देखूँ। उसमें हीरो और हीरोइन का ऐसा दृश्य देखा कि मन पर अंकित हो गया और रात को स्वप्न में अपना सत्यानाश कर लिया।

साधक का जीवन कुछ और होता है।

जो इन्द्रियों के पाँच गोलकों को, नस-नाड़ियों को मजा दिलाने में अपना आत्मघात करता है ऐसे व्यक्ति का मन होता है पीपल के पत्ते जैसा। किसी विषय का कुछ भी सुनाई पड़ा, दृश्य देखा तो विकार उत्पन्न हो गये। ऐसे आदमी को भगवान सावधान करते हैं :

सर्वतो मनसो असंगो आदौ संगं च साधुषु ।

विषय-विकारों से मन को सर्वथा असंग करो और साधु पुरुष का संग करो तो तुम्हें बल मिलेगा।

अलि पतंग मृग मीन गज एक एक रस आँच ।
तुलसी तिनकी कौन गति जिनको व्यापे पाँच ॥

एक एक विषय में मूर्ख प्राणी, मूर्ख जन्तु अपनी जान गँवा देते हैं तो जिसको पाँचों इन्द्रियाँ घसीट रही हैं, जो उन पाँचों के पीछे घसीटा जा रहा है उस मनुष्य की क्या गति होगी?

लोग काम विकार के खड्डे में गिर-गिरकर फिर से गिरते हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध के विषय में गिर-गिरकर फिर से गिरते हैं। पता है कि यह खाने से बीमारी होगी। फिर भी... 'बाद में देखा जायेगा। अभी तो मैं खा लूँ।' जीभ को लाड़ लड़ाते हैं।

मनुष्य फिर-फिर से वही काम करता है, जो काम करने के बाद पश्चात्ताप हो। भोग भोगने से निस्तेज हो गये, शक्तिहीनता, पराधीनता और रुग्णता आयी, ऐसा अनुभव किया फिर भी अपने को उसी में पटकता है।

जीवन को इतना तुच्छ न बनाओ कि बस, कोई भी दृश्य तुम्हें खींच ले।

पहले तो कहावत थी :

'सुरतनुं जमण अने काशीनुं मरण ।'

मगर अभी तो लगता है :

'सुरतनुं जमण अने पेटनुं मरण ।'

काशी में मृत्यु जब सार्थक थी तब थी मगर अभी तो यहाँ पेट की मृत्यु हो रही है।

जिसका शरीर तंदुरुस्त नहीं है उसका मन थका-सा रहता है और थका हुआ मन सुख चाहता है। फिर विकारों के सुख में, प्यालियों के सुख में अपने को सताने में लग जाता है।

भगवान का **'सर्वभूतहिते रताः'** स्वभाव है। परमात्मा **'सुहृदं सर्वभूतानां'** है। जो प्राणीमात्र के सुहृद हैं वे परमात्मा कहते हैं कि साधक को सब विषयों की ओर से मन को विरक्त करना चाहिए। सत्पुरुषों का संग करना चाहिए।

आदौ संगं च साधुषु ।

साधु पुरुष का संग जीव को ऊर्ध्वगामी बनाता है जबकि विषयी पुरुषों का संग अधोगामी बना देता है। जो साधक हैं, पवित्र लोग हैं वे भी अगर विषयी और विकारी लोगों के बीच बैठकर भोजन करें, विषयी पुरुषों के साथ हाथ मिलावें, उनकी हाँ में हाँ करें तो साधक की साधना क्षीण हो जाती है। साधक के सात्त्विक परमाणु नष्ट हो जाते हैं।

रामकृष्ण परमहंस केशवचंद्र सेन के घर जा रहे थे। रास्ते में उन्हें प्यास लगी। पानी माँगा। केशव ने कहा :

"बस, अभी घर आ रहा है। थोड़ी ही देर है।"

घर आया। घर में जाते ही केशवचंद्र सेन ने नौकर को आदेश दिया कि : "पानी लाओ।"

नौकर जग साफ करके पानी भर लाया। रामकृष्ण का चित्त तो अत्यंत स्वच्छ था। उनकी बुद्धि शुद्ध थी। शुद्ध बुद्धि में सब ठीक दिखाई

देता है। रामकृष्ण ने उसे देखते ही मुँह मोड़ लिया। नौकर को डाँट पड़ी।

"जाओ, फिर से स्वच्छता से भरकर ले आओ।"

नौकर फिर से जग और गिलास ठीक से मलकर पानी भर लाया। रामकृष्ण ने पीने के लिए पानी में निहारा। प्यास तो खूब थी मगर मुँह मोड़ लिया। तीसरी बार भी वही हुआ। रामकृष्ण उठकर चल दिये।

गुरु घर पर आते हों, प्यासे हों और शिष्य कहता हो कि : 'गुरुजी ! अभी घर आया... अभी घर आया।" घर आने पर शिष्य उन्हें पानी दे और गुरुजी पानी का अस्वीकार करके वापस चले जाएँ तो शिष्य के मन में क्या गुजरती होगी ?

मौका पाकर केशवचंद्र सेन ने गुरुजी को रिझाकर पूछ ही लिया :

"गुरुदेव ! आप इतने प्यासे, रास्ते में दो-तीन बार पानी पीने की याद दिलाई और फिर जब पानी आपके आगे लाया गया तो आपने मुँह मोड़ लिया। तीन बार पानी का अस्वीकार किया। हमसे क्या गलती हो गई ?"

रामकृष्ण : "केशव ! जाने दो उस बात को।"

केशव : "गुरुदेव ! कृपा करो। मैं इस संदेह को मिटाना चाहता हूँ।"

रामकृष्ण : "जग तो माँजा हुआ था। देखो, अपने नौकर को डाँटना मत। वह नौकर सच्चरित्रवान नहीं था, क्रूर था। उसके हाथ से पानी आने से, पानी में उसकी निगाह पड़ने से पानी अशुद्ध हो गया था। मैं प्यासा मरना कबूल करता हूँ मगर मेरी साधना बिखर जाय यह मुझे कबूल नहीं है। प्यास जोर करेगी, शरीर मिटेगा तो एकबार मिटेगा मगर मेरी साधना अगर बिखर जायेगी तो न जाने मुझे कितनी बार मिटना पड़ेगा !"

जिसका शरीर तंदुरुस्त नहीं है उसका मन थका-सा रहता है और थका हुआ मन सुख चाहता है। फिर विकारों के सुख में, प्यालियों के सुख में अपने को सताने में लग जाता है।

साधक को भगवत् तत्त्व का, साधना का रस मिलता है। वातावरण और सत्संग के संयोग से कुछ ऊँचाई आती है। फिर उसे लगता है कि कुछ खो दिया। ऐसा क्यों ? हम लोग आहार-विहार का ख्याल नहीं रखते और साधना को बिखेर देते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

सर्वतो मनसो असंगो आदौ संगं च साधुषु ।

मन के विकारी आकर्षणों से असंग बनो। असंग नहीं बन सकते हो तो साधु पुरुषों का संग करो। साधुपुरुषों का संग रोज़ नहीं हो सकता है तो उनके अनुभव के वचनों को रोज अपने जीवन में लाओ। जैसे, स्नान करने की रोज़ जरूरत पड़ती है, घर में झाड़ू लगाने की रोज़ जरूरत पड़ती है ऐसे ही हररोज़ सत्शास्त्र का अवलंबन लेना चाहिए। सत्संग की बातें सुननी चाहिए, विचार करना चाहिए। भले रोज़ वही की वही बात सुनने को मिले। रोज़ वही की वही रोटी खाते हो, वही का वही विषय-भोग भोगते हो। नसवारवाले नसवार, बीड़ीवाले बीड़ी, चायवाले चाय वही की वही लेते हैं, अपना कलेजा जलाते हैं तो तुम सत्संग की वही की वही बात अपने अंतःकरण में डालकर भगवन्नाम से पवित्र हो जाओ तो क्या घाटा है ?

*

तुम्हारे चित्त में जो इच्छा उठ रही है, उसकी पूर्ति जीवन के लिए कितनी आवश्यक है? क्या उसके बिना तुम्हारा काम नहीं चल सकता? कम से कम इच्छा करो। हो सके तो उसका नाश कर दो। जब तुम्हारी आवश्यकताओं को तुमसे अधिक जाननेवाला और उनको पूर्ण करनेवाला विद्यमान है, तब तुम क्यों इच्छा करते हो? उस पर विश्वास करो। तनिक सोचो तो, उसको तुम्हारे हित का कितना ज्ञान और ध्यान है!

दिल्ली दूरदर्शन पर प्रसारित

पूज्यश्री का विश्वशान्ति के लिए पावन सन्देश

दिनांक : १४-७-'९२ गुरुपूर्णिमा। प्रातः ८-३०

*** प्रश्नकर्त्ता : डॉ. रमाकान्त शुक्ल ***

प्र० — "भारत साधकों, संतों, दार्शनिकों तथा चिंतकों की स्थली रही है। संतों ने समय समय पर विश्व को आशा का, कर्मठता का संदेश दिया है, उत्साह और भाईचारे की आवाज दी है। संतों की इस आशा के संदेश को आज विश्व में संत श्री आसारामजी महाराज फैला रहे हैं। मैं आपका प्रणाम सह स्वागत करता हूँ। आज के युग में संत श्री आसारामजी के प्रवचनों के लिए सभी वर्ण, जाति, धर्म और सभी आयु-वर्ग के लोग लालायित रहते हैं। आप के चालीस के लगभग ग्रंथ हैं और देश एवं विश्व के विभिन्न भागों में पंद्रह आश्रम मानवता की सेवा के लिए समर्पित हैं। मैं सबसे पहले आपसे यह जानना चाहूँगा कि आज विश्व में जबकि चारों ओर एक विद्वेष की, अशांति की, क्रोध की अग्नि जल रही है, इसके साम्राज्य में लोग एक दूसरे को हड़पने के लिए लालायित हैं, तब इस समय में आपका संदेश एवं संतों के चिन्तन की भूमिका क्या दिशा देती है?"

पूज्यश्री : "विश्व के लोगों से मेरा संदेश है कि हिंसा से या शोषण से कभी शांति या सुख कोई नहीं पा सकता। आज हमें मानव-शास्त्र पढ़ने की जरूरत है। विज्ञान संसार को सुंदर बनाने के बजाय भयानक बनायेगा, अगर उसके साथ मानवज्ञान नहीं जुड़ा है तो। विज्ञान का उपयोग करें परंतु उपयोग करनेवाले व्यक्ति के हृदय को अगर मानवता के ज्ञान से सजाया नहीं जायेगा तो बंदर के हाथ जली हुई लकड़ी देने जैसा अपराध हो सकता है।

विज्ञान का उपयोग करनेवाले व्यक्ति के हृदय को अगर मानवता के ज्ञान से सजाया नहीं जायेगा तो बंदर के हाथ जली हुई लकड़ी देने जैसा अपराध हो सकता है।

आज का प्रत्येक इन्सान अपनी इच्छाएँ, वासनाएँ, आवश्यकताएँ इतनी बढ़ा चुका है कि किसी भी क्षेत्र में वह अपनी जिम्मेदारी तो कम महसूस करता है परंतु अधिकारों पर ज्यादा नजर रखता है। मनुष्य अगर अपनी जिम्मेदारी महसूस करे तो उसके अधिकार की पूर्ति अपने आप हो जाती है।

दूसरी बात :

'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।'

अपने लिए जो अच्छा नहीं लगता है वैसा व्यवहार दूसरों के लिए न करें। आज देखा जाता है कि हर इन्सान दूसरे का शोषण करके भी अपने को सुखी रखना चाहता है। परंतु....

अपने दुःख में रोनेवाले
तू मुस्कुराना सीख ले ।
दूसरों के दुःख दर्द में
आँसू बहाना सीख ले ।
आप खाने में वो मजा नहीं
जो औरों को खिलाने में है ।
जिन्दगी है चार दिन की
तू किसी के काम आना सीख ले ।

दूसरों के काम आने का जो मानव ज्ञान है, **'परस्पर देवो भव'** की जो भावना है वह अगर विकसित हो तो एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों को आपस में लड़ाकर हथियार बेचने के बजाय एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र का मंगल चाहेगा, एक प्रांत दूसरे प्रांत का मंगल चाहेगा, एक गाँव दूसरे गाँव का मंगल चाहेगा। एक व्यक्ति पडोस के प्रत्येक व्यक्ति का मंगल चाहेगा। यह मानवज्ञान है। इस मानव ज्ञान सहित का विज्ञान संसार को सुन्दर बनायेगा

और मानवज्ञान रहित हमारी आकांक्षाएँ और साधन संसार को सुंदर बनाने के बजाय भयानक बना देंगे। आपने देखा सुना होगा कि शेर जंगल में बार-बार मुड़कर पीछे देखता है कि कोई मुझे खा न ले। हालांकि उसने हाथी के सिर का खून पिया है, फिर भी उसे भय रहता है कि कोई मुझे खा न ले। उसका अपना हिंसक स्वभाव ही उसे डराता है। ऐसे ही हिंसक आदमी भीतर से भयभीत रहता है। जितना भीतर से भयभीत रहता है उतना ही बाहर से भी भय और अशांति फैलाता है। अशांति फैलाकर, दूसरों को दबाकर, बंदूक पर हाथ रखकर या बम के सहारे सुख का जीवन जी सके यह संभव नहीं है। प्रेम, मानवता, सहानुभूति, **'परस्पर देवो भव'** की भावना के सहारे विश्व मंगलमय और शांतिमय हो सकता है।"

प्र० — "आपने हजारों साल के ऋषि-मुनियों के ज्ञान का निचोड़ सादे सीधे शब्दों में कह दिया है। जो लोग विश्व में दुष्प्रवृत्तियाँ फैला रहे हैं उनके कानों तक हमारे अच्छे अच्छे उपदेश पहुँच नहीं पाते हैं। उनकें कानों तक पहुँचे और मन तक असर कर सकें इसका कोई उपाय आपके पास है?

पूज्यश्री : "जो शुभ आचारमय जीवन जीते हैं, ऐसे लोग प्रातःकाल उठकर अपने सूक्ष्म संकल्प वातावरण में भेजें। मानो कोई बीमार आदमी है। उसे तंदुरुस्त होने के लिए सुबह सुबह अपनी बीमारी का चिंतन न करना चाहिये लेकिन 'मेरा भाई तंदुरुस्त रहे, मेरा पडोसी तंदुरुस्त रहे...' ऐसे भाव फेंके तो वह खुद तंदुरुस्त हो जाता है। 'कोई लोग जटिल हैं... ऐसे वैसे हैं...' ऐसे चिन्तन की अपेक्षा 'भगवान उनको सद्बुद्धि दे, सबका मंगल हो...' ऐसा चिन्तन करना चाहिए। कोई आदमी अशांति फैलाता है, उसके कान तक शांति की बातें नहीं पहुँचती हैं तो उसके कुटुंब के लोग जब भी वह आदमी सोया हुआ हो तब उसके सिर के पीछे नजर डालकर संकल्प करें कि, 'भाई! अशांति का, दुराचार का जीवन ठीक नहीं। बहुत शराब पीकर जिंदगी खराब मत करो।' माँ, पत्नी या परिवार के व्यक्ति अशांति फैलानेवाले व्यक्ति के सिर के पीछे एक नजर करके ऐसा बार-बार दुहराते हैं तो वह व्यक्ति बदला हुआ मिलता है। ऐसे मेरे कई प्रयोग किये हुए हैं।"

प्र० — "व्यक्ति को सदा पुरुषार्थमय रहना चाहिए या उसे अपने आराम के लिए, व्यक्तिगत साधना के लिये समय अधिक देना चाहिये?

पूज्यश्री : "इसमें दो विभाग हैं : जिनकी प्रवृत्ति-प्रधान भावना है उन्हें खूब प्रवृत्ति करना चाहिए। जगत के और अपने हित के लिये खूब पुरुषार्थ करना चाहिए। जगत के हित में अपना हित छुपा है। जिनका निवृत्तिप्रधान जीवन है, जो अंतरंग पुरुषार्थ कर सकते हैं वे भले बाहर से समाज की सेवा करते हुए नहीं दिखें, फिर भी अगर समाधि में रहते हैं, अंतरंग यात्रा करते हैं तो उनके संकल्प और उनका अस्तित्व भी वातावरण में बहुत मदद करता है। आलस्य, प्रमाद, विलासिता तो व्यक्ति और समाज को हानिकर्ता हैं ही परंतु जो केवल तू-तू... मैं-मैं, हा-हा... ही-ही, करके केवल प्रचार-प्रसार में ही लगे रहते हैं और अंतरंग साधना नहीं करते हैं उनकी वाणी में उतना प्रभाव नहीं आता और उनके अस्तित्व से विशेष आध्यात्मिक या मानवता के उत्कर्ष के परमाणु नहीं बनते। इसलिए साधना भी करें और साधना की तरफ दूसरों को चलाते भी रहें। ऐहिक साधनों का सदुपयोग करें।

एक होती है शिक्षा और दूसरी होती है दीक्षा। शिक्षा से वस्तुओं का परिवर्धन, परिमार्जन होता है और दीक्षा से व्यक्ति के अंतःकरण का परिवर्धन परिमार्जन होता है।

हिंसक आदमी भीतर से भयभीत रहता है। जितना भीतर से भयभीत रहता है उतना ही बाहर से भी भय और अशांति फैलाता है। अशांति फैलाकर, दूसरों को दबाकर, बंदूक पर हाथ रखकर या बम के सहारे सुख का जीवन जी सके यह संभव नहीं है। प्रेम, मानवता, सहानुभूति, 'परस्पर देवो भव' की भावना के सहारे विश्व मंगलमय और शांतिमय हो सकता है।

वस्तुओं की सुचारु रूप से उपयोग की व्यवस्था को विज्ञान कहते हैं, और व्यवस्था करनेवाले को व्यवस्थित करने को धर्म कहते हैं।

प्रतिदिन अपने अपने इष्टदेव को आराधता हुआ, प्रार्थना, भजन करता हुआ आदमी अपने अंतःकरण को सँवारे। दिशा अगर उचित है तो शिक्षा का सदुपयोग होगा और दिशा अगर उचित नहीं है तो शिक्षा कितनी ही मिल जाय, अधिकार कितने ही मिल जाय, साधन कितने ही मिल जायें फिर भी विश्व में अशांति रहेगी। शिक्षा के साथ दीक्षा की बहुत जरूरत है।

जिनकी प्रवृत्तिप्रधान भावना है उन्हें जगत के और अपने हित के लिये खूब पुरुषार्थ करना चाहिए। जिनका निवृत्तिप्रधान जीवन है, जो अंतरंग पुरुषार्थ कर सकते हैं वे भले बाहर से समाज की सेवा करते हुए नहीं दिखें, फिर भी अगर समाधि में रहते हैं, अंतरंग यात्रा करते हैं तो उनके संकल्प और उनका अस्तित्व भी वातावरण में बहुत मदद करता है।

किसीने कान फूंक दिया या किसी मंदिर-मंस्जिद में चले गये उसको दीक्षा नहीं कहते।

प्र० — "आज के युग में भी हमारे यहाँ गुरु-शिष्य के संबंध के प्रति अति आदर है। गुरु और शिष्य के लिये आपके कुछ विचार..."

पूज्यश्री : "गुरु... गु = अंधकार, रु = प्रकाश। हमारे हृदय के अज्ञान-अंधकार को दूर करके आत्मज्ञान का प्रकाश करें उन्हें गुरु कहा जाता है। जो हमारी बिखरी हुई चेतना को सुव्यवस्थित करें उन्हें व्यास कहा जाता है। भगवान वेदव्यासजी ऐसे महापुरुष हुए जिन्होंने गुरुपूनम के दिन विश्व के प्रथम आर्षग्रंथ ब्रह्मसूत्र की रचना का आरंभ किया था। वेदव्यासजी ने बिखरे हुए सदुपदेशों को व्यवस्थित किया। बिखरी हुई हमारी चेतना को व्यवस्थित करते हैं, उन्हें व्यास कहा जाता है और हमारे जीवन में आत्मज्ञान का प्रकाश देने की व्यवस्था करते हैं उन्हें गुरु कहा जाता है। वेदव्यासजी गुरु भी हैं और व्यास भी हैं। ज्ञान की व्यवस्था करना और प्रकाश देना यह गुरु का स्वभाव रहा है।"

डॉ. शुक्ल : "इसी स्वभाव को फैलाना किसी भी क्षेत्र के गुरु का कर्त्तव्य है। अध्यात्म, विज्ञान, हुन्नर, संगीत, योग आदि किसी भी विद्या या शिक्षा के गुरु का कर्त्तव्य है कि वे अपनी नई उभरती पीढ़ी को कर्मठ बनायें। संतों की दृष्टि में तो सही दिशा परोपकार की है, विश्व के उपकार की, विश्व को भगवान मानने की है। उस विश्व की सेवा करँना ही आपका संदेश है। विश्व की सेवा में आज की सारी पीढ़ी लग जाय। आपका यह संदेश जन-जन में फैले, इस कामना, आशा के साथ मैं संत श्री आसारामजी महाराज को बहुत बहुत धन्यवाद देता हूँ। आपने अपने अमूल्य विचार हमारे दर्शकों को उपलब्ध कराये।"

*

पू. बापू के आश्रम द्वारा प्रकाशित रियायती मूल्यवाली
विद्यार्थी-नोटबुकों का स्थान-स्थान पर ऊष्मापूर्ण स्वागत

जनता जनार्दन को महंगाई का अजगर भीषण लपटों में लपेट रहा है। ऐसे संयोगों में सरस्वती के उपासक विद्यार्थी आलम को थोड़ी भी राहत हो ऐसी कल्याण भावना से प्राणीमात्र के परम हितैषी परम कृपालु पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के आश्रम द्वारा इस वर्ष पूज्य बापू के पावन संदेशयुक्त, विविध रंगों के और लेमीनेशन किये हुए टाइटलयुक्त, प्रत्येक पृष्ठ पर दिव्य जीवन के लिए प्रेरणा, शौर्य, साहस, उत्साह तथा अनोखी शक्ति का संचार कर दे ऐसे हिन्दी और गुजराती वाक्यों से सज्ज सुपर डिलक्स क्वालीटी की साढ़े सात लाख नोटबुकें तैयार करके राहत दर से छात्रों में वितरित की गई। गुजरात, राजस्थान और मध्यप्रदेश में बहुत लोगों ने इस कल्याण योजना का लाभ लिया। इस वर्ष पूज्य बापू द्वारा बनवाई गई नोटबुकों के लिए विद्यार्थियों, उनके अभिभावकों, शिक्षकों तथा आचार्यों की आग्रह भरी मांग को देखते हुए आते वर्ष अधिक संख्या में नोटबुक बनवाने की तैयारी अभी से ही विचाराधीन है।

चिन्तकों द्वारा प्रश्न
और
पूज्यश्री के सहज स्वाभाविक परमात्म-प्रेरणा से स्फुरित
राष्ट्रोपयोगी उत्तर

* सुभाष ओझा व जगदीश शर्मा द्वारा, नीमच। *

भक्ति, योग, वेदान्त, अध्यात्म और जीवन-दर्शन के गहन ज्ञान और हृदयंगम सरल-सुबोध प्रवचन-शैली के आधार पर संत श्री आसारामजी बापू ने जन-समुदाय के बीच आदर व श्रद्धा का ऊँचा मुकाम हासिल किया है। विगत दिनों जावद प्रवास के दौरान बापूजी से विभिन्न मुद्दों पर हुई बातचीत के प्रमुख अंश...

प्रश्न — क्या ऐसा कोई दर्शन है, जिसे अपनाकर मनुष्य भौतिक व आध्यात्मिक दोनों ही स्तरों पर पूर्ण संतोष प्राप्त कर राष्ट्र के प्रति भी अपना फर्ज पूरा कर सके?

उत्तर — अगर सही मार्गदर्शन हो तो यह कार्य कठिन नहीं है। हमारे देश में तो यह परम्परा-सी रही है। आप देखिए, योग्य गुरु के मार्गदर्शन में अतीत काल में राजा महाराजा राज्य के सभी भौतिक सुखों के साथ-साथ अध्यात्म की अनुभूतियाँ भी करते थे और सामंजस्य कायम कर राज्य की सेवा भी करते थे। भगवान श्रीराम व श्रीकृष्ण भी इस संदर्भ में आदर्श उदाहरण हैं, जिन्होंने राज्य की भौतिकता के स्वीकार के साथ-साथ जीवन में अध्यात्म के स्तर को भी चरम सीमा पर रखा और आदर्श राज्यसेवी भी सिद्ध हुए।

...तो मूल बात यह है कि अगर बेहतर संतुलन कायम हो सके तो चालू हालातों में, गृहस्थ रहते हुए भी व्यक्ति भोग और मोक्ष एक साथ हासिल कर सकता है। अध्यात्म की गहरी समझ व्यक्ति को ऐसा उत्कृष्ट संतुलन कायम करने में सहायक सिद्ध हो सकती है।

प्रश्न — भारत जैसे नैतिकताप्रधान देश में आज सर्वाधिक नैतिक पतन दिखाई देता है। इस विसंगति के लिए आप किसे दोषी पाते हैं?

उत्तर — वास्तव में यह स्थिति अत्यंत खेदजनक है कि नैतिक मापदण्डों पर विश्व का सिरमौर माना जाने वाला भारत आज नैतिक पतन की भीषण त्रासदी भोग रहा है। वस्तुतः इस स्थिति के लिए हालात अधिक जिम्मेदार हैं। इस देश के नागरिक सदियों तक गुलाम रहे। भिन्न-भिन्न संस्कृति के लोगों ने यहाँ राज किया। जनता पर दमन किया। इससे दो बातें हुई : गुलामी व दमन ने नागरिकों के आत्मबल को क्षीण किया और विभिन्न संस्कृतियों ने हमारी मूल जीवन-शैली को दूषित कर दिया।

क्षीण आत्मबल और दूषित जीवन-शैली हमारी नैतिक शक्ति को दीमक की तरह चाट गई। यही वजह है कि आज का भारतीय योग की जगह भोग की ओर प्रवृत्त है और अपनी ही बर्बादी का सामान इकट्ठा कर रहा हैं।

प्रश्न — क्या नैतिक पतन के लिए अशिक्षा और गरीबी जैसे कारण जिम्मेदार नहीं हैं?

वास्तविक रूप से धर्म पर अवलम्बित कोई भी संत आचार्य पतन की राह नहीं दिखा सकता। हाँ, यह बात और है कि अन्य क्षेत्रों की तरह आज धर्मक्षेत्र में भी कई असामाजिक तत्त्व प्रवेश कर गये हैं जो धर्म की ओट में विकृतियों का नंगा नाच कर रहे हैं।

उत्तर — कुछ हद तक ही यह बात ठीक हो सकती है, परन्तु वास्तव में यह ठोस कारण नहीं है। देखिए आप, आदि काल से वर्तमान तक निगाहें दौड़ाइये तो आप पाएंगे कि गरीब व असहाय लोग इतने अनैतिक नहीं हुए हैं जितने कि सम्पन्न लोग। अतीत में देखो, मुनि शुकदेव, शंकराचार्य, कबीर, सूरदास और ऐसे असंख्य लोग क्या अमीर थे? नहीं, ये लोग तो भौतिक सम्पदा के मान से पूरी तरह विपन्न व अभावग्रस्त थे, परन्तु इन्होंने ही नैतिकता के सर्वोच्च मापदण्ड स्थापित किये।

भक्त रैदास की बात लें। वे जूते गांठते थे। दो टाईम खाने का ठिकाना तक नहीं। कुछ साधु उनके घर पारस पत्थर रख गए। उन साधुओं के वापस आने तक साल भर वह पारस पत्थर उनके घर पर पड़ा रहा। रैदास चाहते तो पारस पत्थर से लौह को सोने में बदल कर अमीर हो सकते थे, परन्तु उन्होंने तो पत्थर को छुआ भी नहीं। आज भी ऐसा ही है। आपको सर्वाधिक नैतिकता गरीब की झोंपड़ी में मिल जाएगी। दूसरी ओर आप देखिए, अमीरों ने कितनी अनैतिकता फैलाई है! अतीत तो असंख्य उदाहरणों से भरा ही है, मैं आपको बिल्कुल ताजा मिसाल देता हूँ। बंबई के शेयर दलाल हर्षद मेहता को लाभ पहुँचाने के लिए बैंकों व वित्तीय संस्थाओं के जिन उच्चाधिकारियों ने तीन हज़ार करोड़ रूपयों से भी अधिक का घोटाला कर राष्ट्रद्रोह किया, क्या वे लोग गरीब थे? क्या बोफोर्स व पनडुब्बी घोटाले किसी गरीब ने किये? कहने का तात्पर्य यह है कि नैतिक पतन के लिए आर्थिक हालात के बजाय इन्सान की विकृत सोच व अनियंत्रित लालसाएँ जिम्मेदार हैं।

आपको सर्वाधिक नैतिकता गरीब की झोंपड़ी में मिल जाएगी। दूसरी ओर आप देखिए, अमीरों ने कितनी अनैतिकता फैलाई है! बंबई के शेयर दलाल हर्षद मेहता को लाभ पहुँचाने के लिए बैंकों व वित्तीय संस्थाओं के जिन उच्चाधिकारियों ने तीन हज़ार करोड़ रूपयों से भी अधिक का घोटाला कर राष्ट्रद्रोह किया, क्या वे लोग गरीब थे? क्या बोफोर्स व पनडुब्बी घोटाले किसी गरीब ने किये? नैतिक पतन के लिए आर्थिक हालात के बजाय इन्सान की विकृत सोच व अनियंत्रित लालसाएँ जिम्मेदार हैं।

प्रश्न — भारत पुनः किस तरह नैतिकता प्रधान देश बन सकता है?

उत्तर — भारत की मूलभूत संस्कृति का समर्पित भाव से अनुसरण ही एकमात्र मार्ग है, जो हमें फिर से जगत्गुरु के सिंहासन पर बैठा सकता है। आप देखिए, महात्मा गांधी व लालबहादुर शास्त्री जैसे लोग पूर्णरूपेण भारतीय थे, तो अनैतिकता उनके पास भी नहीं फटक सकी। हमें सादा जीवन उच्च विचार के सूत्र पर चलते हुए कथनी व करनी में एकरूपता कायम करनी चाहिए व सच्चे गुणगाहक बनना चाहिए। अभी हम पाश्चात्य जगत की सराहनीय बातें तो अपनाते नहीं परन्तु उनकी चकाचौंधपूर्ण पतनकारी शैली के प्रभाव में जरूर आते रहे हैं। इस सोच को बदलना होगा।

प्रश्न — इस आरोप में कितनी सच्चाई है कि भारत में धार्मिक पतन के लिए धर्मगुरुओं का समूह ही सबसे ज्यादा दोषी है?

उत्तर — मैं इस आरोप से एक प्रतिशत भी सहमत नहीं हूँ। वास्तविक रूप से धर्म पर अवलम्बित कोई भी संत, आचार्य पतन की राह नहीं दिखा सकता। हाँ, यह बात और है कि अन्य क्षेत्रों की तरह आज धर्मक्षेत्र में भी कई असामाजिक तत्त्व प्रवेश कर गये हैं जो धर्म की ओट में विकृतियों का नंगा नाच कर रहे हैं।

प्रश्न — सेक्स और अध्यात्म के समन्वय के बारे में आपका मत क्या है? क्या संभोग से समाधि संभव है?

उत्तर — सेक्स व अध्यात्म का कोई समन्वय संभव नहीं है। 'जहाँ काम है, वहाँ राम नहीं, जहाँ राम है, वहाँ काम नहीं।' संभोग से समाधि की परिकल्पना ही फिजूल है। अगर ऐसा होता तो दिन रात संभोग में लीन कीट पतंगों व पशुओं को भी समाधि हो जाती। परंतु यथार्थ में ऐसा है नहीं। संभोग से व्यक्ति का शरीर व मन

क्षीण होता है, जबकि समाधि तो आत्मकल्याण का मार्ग है। भला दोनों में क्या मेल?

सेक्स व अध्यात्म का कोई समन्वय संभव नहीं है। संभोग से समाधि की परिकल्पना ही फिजूल है। संभोग से व्यक्ति का शरीर व मन क्षीण होता है, जबकि समाधि तो आत्मकल्याण का मार्ग है। भला दोनों में क्या मेल?

प्रश्न — समय और मानवता की मांग के अनुरूप क्या धर्मगुरुओं को बाबा आमटे व मदर टेरेसा जैसे सेवाकार्यों को नहीं अपनाना चाहिए?

उत्तर — देखिए, संत लोग व धर्मगुरु तो पहले से ही मानवसेवा के ही कार्य में लगे हैं। परन्तु उनकी सेवा मूल कर्मयोगी की तरह है, इसीलिए आपको दिखाई नहीं देती। मदर टेरेसा के काम इतने नहीं हैं जितने कि प्रचारित किए गए हैं। उनका कार्य-अस्तित्व अधिकांशत: प्रचार माध्यमों की देन है।

प्रश्न — क्या विनोबा भावे की यह शिक्षा अधिक उचित व प्रासंगिक नहीं है कि शिक्षार्थी को सैद्धांतिक ज्ञान के साथ व्यावहारिक धरातल पर भी कार्य करवाया जाए?

उत्तर — मैं इससे पूरी तरह सहमत हूँ। केन्द्र व राज्य सरकारों को चाहिए कि देश के मौजूदा शैक्षणिक ढांचे में यथोचित बदलाव कर विनोबाजी के बताए अनुसार चलें।

प्रश्न — आजादी के बाद भारतीय नागरिकों की सोच में क्या बदलाव आपने महसूस किया है?

उत्तर — आजादी के बाद लोगों की सोच भारतीय संस्कृति के जीवन व राष्ट्र-उद्धारक बातों से भटक कर आत्मघाती छिछली बातों पर उतर आई है। नतीजा यह है कि आज नागरिक राष्ट्र व मानव हित के बजाय स्वहित के दोषपूर्ण चिन्तन पर चल रहा है।

प्रश्न — देश के बड़े संतों के द्वारा सत्ता से रिश्ते जोड़ने की प्रवृत्ति विकसित हुई है। आपके आयोजनों में प्राय: नेता व मंत्री दिखाई देते हैं। क्या इन बातों से संतों की तटस्थता प्रभावित नहीं होती?

उत्तर — देखिए, संत अगर राज्य सत्ता से प्रभावित हो जाएँ तो यह ठीक नहीं है, परन्तु यदि संत हर स्थिति में निर्लिप्त भाव से रहें तो धर्म व राज्य का मेल सदैव प्रजा के लिए लाभकारी सिद्ध हुआ है। आदिकाल से ही सत्ताधारी लोग संतों से उचित मार्गदर्शन लेते हैं। गुरु वशिष्ठ के मार्गदर्शन से राम आदर्श राजा सिद्ध हुए।

वस्तुत: संतों की संगति सत्ताधारियों को सत्तामद की उद्दण्डता से मुक्त कर राज्य को नीतिपूर्वक चलाने की प्रेरणा देती है। देखिए, पं. जवाहरलाल नेहरू भी माँ आनंदमयी के पास जाते थे, नीति ज्ञान लेने। इसीलिए नेताओं का संतों के पास आना शुभ ही है।

वस्तुतः संतों की संगति सत्ताधारियों को सत्तामद की उद्दण्डता से मुक्त कर राज्य को नीतिपूर्वक चलाने की प्रेरणा देती है। देखिए, पं. जवाहरलाल नेहरू भी माँ आनंदमयी के पास जाते थे, नीति ज्ञान लेने। इसीलिए नेताओं का संतों के पास आना शुभ ही है।

प्रश्न — आज राजनीतिज्ञों की विश्वसनीयता में भारी गिरावट आई है। क्या ऐसा नहीं है कि राजनेता संतों के पास जाकर उनके प्रति कायम जनश्रद्धा को परोक्ष रूप से अपनी ओर मोड़ने की चतुराई दिखा रहे हैं? इस तरह राजनीतिज्ञ क्या संतों का इस्तेमाल नहीं कर रहे हैं?

उत्तर — देखिए, नेता चाहे जिस दूषित लक्ष्य से आए, परन्तु वह संतों के पास आकर शुद्ध ही होगा, फिर भी संतों को यह सतर्कता बरतनी ही चाहिए कि उनका दुरुपयोग नहीं हो। खुद मैं इस मामले में बहुत सावधानी रखता हूँ।

प्रश्न — लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप से आप संतुष्ट हैं?

उत्तर — आजादी के बाद जो व्यवस्था चली है, उससे लोगों का ज्यादा भला नहीं हुआ है। आज हालात इतने कष्टप्रद होते जा रहे हैं कि लोकतंत्र की सफलता पर प्रश्नचिन्ह लग रहे हैं?

प्रश्न — इसका अर्थ यह है कि हमें संविधान की व्यवस्थाओं को बदलना होगा?

उत्तर — व्यवस्थाओं में बदलाव से क्या होगा? दोष तो मूलत: होता है व्यवस्थाओं को क्रियान्वित करने वालों में। इसीलिए व्यवस्थाओं को लाभकारी स्वरूप में लाने के लिए आवश्यक है कि कायदों का दुरुपयोग करने वालों के खिलाफ लोग जागरुक हों।

प्रश्न — बापू ! आज के हिंसक व खुदगर्ज माहौल के लिए क्या आप महज फिल्मों को ही दोषी पाते हैं?

उत्तर — बराबर। विकृतियों के लिए फिल्मों को ही दोषी पाता हूँ मैं। फिल्मों ने समाज को, युवा पीढ़ी को, हमारी मान्यताओं को हर लिहाज से दूषित व पथभ्रष्ट किया है।

विकृतियों के लिए फिल्मों को ही दोषी पाता हूँ मैं। फिल्मों ने समाज को, युवा पीढ़ी को, हमारी मान्यताओं को हर लिहाज से दूषित व पथभ्रष्ट किया है।

प्रश्न — इस हिसाब से फिल्मों के ही आधार पर सत्यजितराय को 'भारत रत्न' का सर्वोच्च राष्ट्रीय सम्मान देना क्या आप औचित्यपूर्ण मानते हैं?

उत्तर — सत्यजितराय कौन हैं? मैं उनके बारे में कुछ जानता नहीं। इसलिए इस बाबत कुछ कह नहीं सकता।

प्रश्न — क्या मात्र धार्मिक बन जाने से ही मौजूदा समस्याओं का हल संभव है या हमें समस्याओं के वास्तविक समाधान खोजने होंगे?

उत्तर — मेरे हिसाब से तो अगर यह देश पुन: वास्तविक रूप से धार्मिक हो जाए तो स्वर्णिम अतीत को लौटाया जा सकता है।

प्रश्न — बापू, आज देश की सबसे ज्वलंत समस्या जनसंख्या-वृद्धि और पर्यावरण विनाश है। परंतु अधिकांश संत अपने धर्मोपदेश में इनका जिक्र नहीं करते। क्या यह उचित नहीं होगा कि आप समेत सभी संत अपने प्रवचनों में अपने श्रद्धालुओं को दो वृक्ष लगाकर संतान की तरह पालने व केवल दो-दो संतानें ही पैदा करने का संकल्प दें?

उत्तर — यह बिल्कुल उचित बात है। ऐसा ही होना भी चाहिए। मैं तो इस तरह की बात करता भी रहा हूँ। आगे भी नियमित रूप से ऐसा हो, प्रयास करूँगा। मैं एक बात और कहना चाहूँगा। सरकार पर्यावरण व जनसंख्या नियंत्रण के बारे में दूरदर्शन पर पता नहीं किन-किन लोगों को लेकर प्रचार करवाती है। यदि इन मुद्दों पर सरकार संतों का उपयोग करे तो बहुत व्यापक असर होगा। दरअसल, सरकार धर्मसत्ता का सदुपयोग करे तो गहन समस्याओं के भी आसान हल हो सकते हैं।

सरकार पर्यावरण व जनसंख्या नियंत्रण के बारे में दूरदर्शन पर पता नहीं किन-किन लोगों को लेकर प्रचार करवाती है। यदि इन मुद्दों पर सरकार संतों का उपयोग करे तो बहुत व्यापक असर होगा। दरअसल, सरकार धर्मसत्ता का सदुपयोग करे तो गहन समस्याओं के भी आसान हल हो सकते हैं।

प्रश्न — पत्रकारिता के बारे में आपकी क्या राय है और पत्रकारों के लिए क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर — पत्रकार लोग इस देश के कल्याण में अहम् भूमिका अदा कर सकते हैं। जो पत्रकार खुदगर्जी छोड़कर मानव व राष्ट्र की सच्ची सेवा में लगे हैं, उनको मैं धन्यवाद देता हूँ। ईश्वर उनको दीर्घायु बनाए तथा मेरा एक ही आह्वान है पत्रकारों से कि सदैव सत्य के हिमायती बने रहो।

*

योगसामर्थ्य और आत्मज्ञान

गुजरात के कच्छ जिले में आदिपुर के पास गोपालपुरी स्टेशन है। वहाँ किसी रेलवे के अधिकारी के यहाँ गुरुमहाराज श्री लीलाशाहजी बापू का पदार्पण हुआ। वापसी में कार बुलवाने में देरी हो गई। बाबाजी ने कहा : "केवल तीन-चार कि.मी. पर ही तो है आदिपुर। चलो, हम टहलते टहलते ही वहाँ चलते हैं।" घूमने का तो शौक था ही बाबाजी को।

इतने में देखा कि गोपालपुरी स्टेशन से ट्रेन सीटी मारती हुई चल पड़ी।

बाबा ने पूछा : "यह गाड़ी कहाँ जायेगी?"

वह ओफिसर बोला : "साँई! यह तो आदिपुर जायेगी, अपने आश्रम के पास ही।"

बाबा : "तो फिर चलो, इसमें ही बैठते हैं।"

वह : "पर साँई! इसे तो सिग्नल मिल गया है। इसने प्लेटफार्म भी छोड़ दिया है।"

बाबा : "तो इसमें क्या हो गया? अभी हमें तो दिखती है न? उससे बोलो खड़ी रहे... और तू तो रेलवे का ऑफिसर है। तू बोलता नहीं खड़ी रहे?"

वह : "बाबा! हम यहाँ बोलेंगे तो इंजिन कहाँ सुनेगा?"

बाबा : "मेरी बात तो मान। बोल, रुक जा... रुक जा।"

उसने कहा : "माई! रुक जा। साँई बोलते हैं रुक जा।"

क्या पता क्या हुआ, गाड़ी खड़ी हो गई। ड्राईवर लाख प्रयत्न करे, गाड़ी चले ही नहीं। बाबाजी और वह ऑफिसर फर्स्ट क्लास में जा बैठे। वह ऑफिसर बेचारा स्वामीजी के आगे गद्‌गद् होकर कहने लगा : "साँई! आपकी लीला न्यारी है!"

बाबाजी : "अरे! तू टिकट ले आ।"

वह : "साँई टिकट की कोई जरूरत नहीं है।"

बाबाजी : "तुझे तो कोई जरूरत नहीं, तू तो रेलवे विभाग का है, मगर मैं थोड़े ही रेलवे विभाग का हूँ!"

वह : "पर साँई! इस दौरान गाड़ी चल पड़ी तो?"

बाबाजी : "अरे! तू बात काटता है? जा टिकट ले आ।"

वह आदमी गया, प्लेटफार्म पर से टिकट ले आया और बैठा।

बाबाजी ने कहा : "अरे! ऐसे कैसे बैठता है? जब गाड़ी को रोका है तो पहले ब्रेक खोल दे। इसको ठहरने को कहा था न! अब इसे चलने की आज्ञा दे दे। बेचारा ड्राईवर परेशान हो रहा होगा कि क्या है, क्या नहीं? देख, लोग भी सब नीचे उतर रहे हैं। ले यह कमंडल। उसमें से पानी का छींटा मार और बोल : 'चल माई, चल।' और वह चलेगी।"

...और वैसा ही हुआ।

आप लोग इस बात को बहुत बड़ी मानते हैं। मगर हमारे गुरुजी इस बात को बड़ी नहीं मानते थे। हम भी इसको बड़ी नहीं मानते। हम जब साधना करते थे तब ऐसे चमत्कार हुआ करते थे।

मगर यह कोई बड़ी चीज नहीं है। बड़ी से बड़ी चीज है ब्रह्मविद्या, आत्मसाक्षात्कार। उसे प्राप्त करने के बाद यह सब मदारी के खेल जैसा लगता है। हालांकि, यह मदारी का खेल नहीं है। यह तो सत्य संकल्प का आध्यात्मिक यौगिक बल है।

योगी अगर प्राण को सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम कर ले तो यह सूर्य, नक्षत्र और ग्रहों को उनकी जगह से हटाकर अपनी इच्छानुसार गेंद की तरह घुमा सकता है। स्मरण करने मात्र से देवता उनके आगे हाथ जोड़कर खड़े हो सकते हैं। आवाहन करने से पितर भी उसके आगे प्रगट हो सकते हैं।

योगी अगर प्राण को सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम कर ले तो वह सूर्य, नक्षत्र और ग्रहों को उनकी जगह से हटाकर अपनी इच्छानुसार गेंद की तरह घुमा सकता है।

एकनाथजी महाराज श्राद्धकर्म कर रहे थे। उनके यहाँ स्वादिष्ट व्यंजन बन रहे थे। भिखमंगे लोग उनके द्वार से गुजरे। उन्हें बड़ी लिज्जतदार खुश्बू आयी। आपस

में चर्चा करने लगे : "आज तो श्राद्ध है। खूब माल उड़ेगा।"

दूसरे ने कहा : "अपने को तो वही टुकड़ा-टुकड़ा मिलेगा। ये तो ब्राह्मणों को खिलाएँगे।"

एकनाथजी ने सुन लिया। गिरजाबाई से कहा : "ब्राह्मणों को तो भरपेट बहुत लोग खिलाते हैं। इन लोगों में भी तो ब्रह्म-परमात्मा विराज रहा है। इन्होंने कभी खानदानी ढंग से भरपेट स्वादिष्ट भोजन नहीं खाया होगा। इन्हीं को आज खिला दें। ब्राह्मणों के लिए दूसरा बना दोगी न? अभी तो समय है।"

> **एकनाथजी ने अपनी संकल्प शक्ति, योगशक्ति का उपयोग करके जो ब्राह्मण नहीं आ रहे थे, उनके पिता, पितामह, दादा, परदादा, एक दो पीढ़ी में जो भी थे उन सबका आवाहन किया। सब लोग हाथ जोड़े हुए हाजिर हो गये।**

गिरजा बोली : "हाँ, हाँ पतिदेव ! इसमें संकोच से क्यों पूछते हो ?" गिरजा सोचती है कि जरूर मेरी सेवा में कोई कमी होगी। तभी स्वामी को मुझे सेवा सोंपने में संकोच हो रहा है।

अगर स्वामी सेवक से संकुचित होकर कोई काम कह रहा है तो यह सेवक के समर्पण में कमी है। जैसे कोई अपने हाथ-पैर से निश्चिंत होकर काम लेता है ऐसे ही स्वामी सेवक से निश्चिंत होकर काम लेने लग जाय तो सेवक का परम कल्याण हो गया समझना।

एकनाथजी ने कहा : "तो इनको खिला दे।"

उन भिखमंगों में परमात्मा को देखनेवाले दंपती ने उन्हें खिला दिया। फिर नहा-धोकर गिरजाबाई ने फिर से भोजन बनाना प्रारंभ कर दिया। अभी दस ही तो बजे थे। मगर सारे गाँव में खबर फैल गई कि जो भोजन ब्राह्मणों के लिए बना था वह भिखमंगों को खिला दिया गया। गिरजाबाई फिर से भोजन बना रही है।

सब लोग अपने अपने विचार के होते हैं। जो उद्दंड ब्राह्मण थे उन्होंने फैलाया कि यह ब्राह्मणों का घोर अपमान है। श्राद्ध के लिए बनाया गया भोजन म्लेच्छ लोग जो कि नहाते, धोते नहीं, मैले कपड़े पहनते हैं, शरीर से बदबू आती है, ऐसे लोगों को खिला दिया और हमारे लिए अब बनेगा ? हम जूठन खायेंगे ? पहले वे खायें और बाद में हम खायेंगे ? हम अपने इस अपमान का बदला लेंगे। तत्काल ब्राह्मणों की मिटिंग बुलाई गई। पूरा गाँव एक तरफ हो गया। एकनाथजी के घर, द्वार पर लठधारी दो ब्राह्मण खड़े कर दिये गये। इनके यहाँ भोजन करने कोई नहीं जायेगा। इनके श्राद्ध-कर्म में कोई नहीं जायेगा ताकि इनके पितर नर्क में पड़ें और कुल बरबाद हों।

> **जो काम दो घंटे में होता है, वायुविज्ञान के प्रभाव से वह दो सैकन्ड में भी हो सकता है। जो फूल दो दिन में खिलता है उसे मैं दो सैकंड में खिला सकता हूँ।**

इधर गिरजाबाई ने भोजन तैयार कर दिया। एकनाथजी ने देखा की ये लोग किसीको आने देने वाले नहीं हैं। तो क्या किया जाय ? जो ब्राह्मण नहीं आ रहे थे, उनके पिता, पितामह, दादा, परदादा, एक दो पीढ़ी में जो भी थे, अपनी संकल्पशक्ति, योगशक्ति का उपयोग करके उन सबका आवाहन किया। सब लोग हाथ जोड़े हुए हाजिर हो गये।

"क्या आज्ञा है महाराज ?"

एकनाथजी बोले : "बैठिये ब्राह्मणदेव ! आप इसी नगर के ब्राह्मण हैं। अब पितर लोक में गये थे। बैठिये, भोजन कीजिये।"

भोजन के समय वे हस्तप्रक्षालन, आचमन आदि पर श्लोक बोले। आवाज सुनकर जो दो ब्राह्मण बाहर खड़े थे वे चौंके : 'दरवाजा तो हमने बाहर से बंद कर रखा है। बरामदे में पत्तलें लगी हैं ! भोजन हो रहा है !'

दरवाजे की दरार से देखकर वे चौंके : 'अरे ! यह क्या ? यह तो मेरा दादा है ! और वह मेरा नाना ! अरे ! यह तो उसका चाचा ! वह फिर उसका दादा !"

दोनों भागे गाँव के ब्राह्मणों को खबर करने : "तुम तो नहीं गये ?"

"हमको तो जाने नहीं दिया।"

"मगर हमारे और तुम्हारे बाप-दादे, नाने, चाचे सब पितर लोक में से उधर आ गये हैं। हाथ जोड़े खड़े हैं। श्राद्ध-कर्म करवाकर भोजन पा रहे हैं।"

ऐसा कोई व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति नहीं जो तुम्हारी आत्मशक्ति के अनुसार बदलने में राजी न हो। परंतु अपने भीतर का यह आत्मबल, यह संकल्पबल विकसित करने की युक्ति किसी सच्चे महापुरुष से सीखने को मिल जाय और उसका विधिवत् अनुष्ठान करे तो, नर अपने नारायण स्वभाव में इसी जन्म में जाग सकता है।

गाँव के लोग भागते आये। तब तक तो सब पान-बीड़ा लेकर विदा हो रहे थे। एकनाथजी उन्हें विदाई दे रहे थे। ब्राह्मण सब देखते ही रह गये। आखिर बोले : "एकनाथजी महाराज! हमने आपको नहीं पहचाना, माफ करें।" उनका फिरसे समझौता हो गया।

पंडित गोपीनाथ कविराज स्वामी श्री विशुद्धानंद सरस्वतीजी का सान्निध्य लाभ कभी-कभी लेते थे। उनमें बड़ी श्रद्धा भी रखते थे। कुछ मैत्री-सी हो गई थी। एक बार पंडितजी की रुद्राक्ष की माला टूट गई। उन्होंने सोचा कि मैं अपने हाथ से माला पिरोऊँ उसकी अपेक्षा संत के हाथों द्वारा माला पिरोई जाय तो प्रभावशाली हो जायेगी। अपनी टूटी हुई माला के मनके, रेशम का धागा और गौमुखी लेकर गये स्वामीजी के पास। उनसे अनुनय विनय की : "इतनी कृपा कर दो।"

तब स्वामीजी ने कहा : "अच्छा, लाओ।"

माला के खुले मनके और धागा उन्होंने गौमुखी में डाले और गौमुखी को मुट्ठी में पकड़कर दो तीन चक्कर घुमाकर वापस दे दिया। पंडितजी ने देखा कि माला गूँथी हुई थी। एक एक मनके के बीच गाँठ लगी हुई थी। मेरु भी वैदिक ढंग से पिरोया हुआ था।

पंडितजी ने स्वामीजी से पूछा : "महाराजजी! यह तो आश्चर्य है! कौन-सी विद्या है यह? एक मिनट भी नहीं लगा और माला पूरी की पूरी गूँथी गई?"

तब महाराज ने कहा : "यह वायुविज्ञान है। मैंने उसका अध्ययन किया है। जो काम दो घंटे में होता है, वायुविज्ञान के प्रभाव से वह दो सैकंड में भी हो सकता है। ऐसे ही सूर्यविज्ञान भी है। विज्ञानी सूर्य की किरणों पर अध्ययन करते हैं वह नहीं। मैंने अंतर्मन की खोजकर सूक्ष्म तत्त्वों पर अध्ययन किया है। जो फूल दो दिन में खिलता है उसे मैं दो सैकन्ड में खिला सकता हूँ। जिस फूल का रंग विसकित होने में दस घंटे लग सकते हैं उसको मैं सैकन्ड के दसवें हिस्से में रंग लाकर दिखा सकता हूँ।" इतना कहते हुए स्वामीजी ने जपाकुसुम के फूल को गुलाबी बना दिया।

परंतु यह विद्या भी आत्मज्ञान के आगे कुछ महत्त्व नहीं रखती। इन विद्याओं से ऐहिक प्रकृति में कुछ रूपांतर कर सकते हैं। पाँच भूतों में से किसी पर अपनी साधना के द्वारा मन की वृत्ति एकाग्र करके नियंत्रण पा लिया तो उसमें आप चमत्कार कर सकते हैं। पृथ्वी तत्त्व पर विजय पानेवाला यहाँ गड़ जावे और उसी समय कलकत्ता में पृथ्वी में से प्रगट हो सकता है। जल तत्त्व को साधनेवाला जल में गोता मारकर जल हो सकता है और फिर जब चाहे तब मनुष्य होकर प्रगट हो सकता है।

तुम्हारी आत्मा में अथाह शक्ति है। जितना तुम्हारा मन सूक्ष्म होता है, प्राण सूक्ष्म होते हैं उतनी ही जड़ और चेतन वस्तुएँ तुम्हारे संकल्प के अनुसार रूपांतरित होती हैं, संचालित होती हैं। ऐसा कोई व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति नहीं जो तुम्हारी आत्मशक्ति के अनुसार बदलने में राजी न हो। परंतु अपने भीतर का यह आत्मबल, यह संकल्पबल विकसित करने की युक्ति किसी सच्चे महापुरुष से सीखने को मिल जाय और उसका विधिवत् अनुष्ठान करे तो, नर अपने नारायण स्वभाव में इसी जन्म में जाग सकता है।

*

क्या तुमने आज किसीकी कुछ सेवा की है? यदि नहीं, तो आज का दिन तुमने व्यर्थ खो दिया। यदि किसीकी कुछ सेवा की है, तो सावधान रहो, मन में कहीं अहंकार न आ जाय! इस विशाल विश्व में तुम्हारा कर्त्तव्य कितना छोटा है? यदि इससे अधिक सेवा कर पाते तो कितना उत्तम होता!

साधकों के प्रति...

– पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सुबह उठते हीं बिस्तर का त्याग न करो। दो मिनट के लिए शरीर को खींचो। फिर दो मिनट के लिए शरीर को ढीला छोड़ दो। शरीर में जहाँ जरूरत होगी, वहाँ शक्ति पूरक बन जायेगी। अब दो मिनट शांत बैठ जाओ। साँस चल रही है, उसे गिनते जाओ। ओठ बंद रखो। जिह्वा न तलुवे को छुए न नीचे छुए, बीच में लटकती रहे। ऐसा नहीं कर पाते हो तो वैसे ही शांत बैठे रहो या फिर दो मिनट के लिए लेट जाओ, शांत... गंभीर।

अब यह चिंतन करना है : "मैं आत्मा हूँ, चैतन्य आत्मा हूँ। सुख-दुःख मन में होते हैं, मुझ आत्मा में नहीं। ॐ शांति... शांति..."

मन ही मन ऐसा चिंतन करो। हो सके तो पाँच मिनट या ज्यादा भी शांत रह जाओ। इस प्रकार करके फिर आज के दिन का संकल्प करो : 'आज यह कार्य करना है, यह नहीं करना है।' कोई जटिल प्रश्न है तो उसका क्या कारण है, क्या निवारण है यह सुबह में शांत होकर सोचने से शुद्ध प्रेरणा मिल जाती है।

अगर इस प्रकार सुझाव लेने की हमारी गति नहीं है तो रात को सोते समय कंठकूप में गुरु का ध्यान करो। तुम जिनको भी गुरु मानते हो, परंतु वे गुरु व्यास होने चाहिए। बोधक गुरु, वाचक गुरु, कारणाख्य गुरु का दम नहीं, सत्गुरु होने चाहिए। उन सत्गुरु का दो मिनट तक कंठकूप में ध्यान करते हुए रात में सो जाओ तो उनसे स्वप्न में वार्तालाप हो सकता है। प्रभात में स्वप्न के द्वारा गुरु प्रेरणा दे सकते हैं।

कभी कोई भी कार्य आवेश में आकर न करो। आवेश में आकर कोई निर्णय नहीं लेना चाहिए। मन में जो आये वह करने लग गये ऐसा नहीं। विचार करना चाहिए कि इसका परिणाम क्या होगा? गुरुदेव अगर सुनें या जानें तो क्या होगा? विवेकरूपी चौकीदार रहेगा तो बहुत सारी विपदाओं से, पतन के प्रसंगों से ऐसे ही बच जाओगे।

की हुई गलती फिर से न करे तो आदमी स्वाभाविक ही निर्दोष हो जाता है। की हुई गलती को फिर से न करना यह बड़ा पायश्चित्त है। गलती करता रहे और प्रायश्चित्त भी करता रहे तो इससे कोई ज्यादा फायदा नहीं होता। इससे तो फिर अंदर में ग्रंथि बन जाती है कि मैं तो ऐसा ही हूँ। जो गलती होती है उसे फिर दुबारा न होने दो। सुबह नहा-धोकर पूर्वाभिमुख बैठकर या बिस्तर में ही शरीर खींचकर, ढीला छोड़ने के बाद यह निर्णय करो कि : 'अमुक अमुक मेरी गलती है, जैसे कि ज्यादा बोलने की। वाचा के अतिसार से मेरी शक्ति क्षीण होती है।'

कइयों का मन वाणी के अतिसार से पीड़ित होता है। इससे हानि होती है। अपना नाम लेकर सुबह संकल्प करो कि : 'देख गोविन्द! आज कम से कम बोलना है। वाणी की रक्षा करनी है। जो ज्यादा अनावश्यक बोलता है उसकी वाणी का प्रभाव क्षीण हो जाता है। जो ज्यादा बोल बोल करता होगा वह झूठ जरूर बोलता होगा। अतिवाचाल है वह झूठा पक्का होगा। कम बोलने से, नहीं बोलने से, असत्य भाषण और निंदा करने से बच जायेंगे। राग-द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध से बचेंगे। अशांति से बचेंगे। न बोलने में छोटे-मोटे नौ गुण हैं।" इस प्रकार मन को समझा दो। ऐसे ही ज्यादा खाने का या काम-विकार का या और कोई भी दोष हो उसे निकाल सकते हैं।

तुम अपने दोष को जितना जानते हो उतना तुम्हारा कुटुंबी नहीं जानता। जितना कुटुंबी जानता है, उतना पड़ोसी नहीं जानता। तुम्हें किसी पड़ोसी की गलती दिखाने पर उसे ठीक करने की इच्छा होती है। अगर गलती

कभी कोई भी कार्य आवेश में आकर न करो। विचार करना चाहिए कि इसका परिणाम क्या होगा? गुरुदेव अगर सुनें या जानें तो क्या होगा? विवेकरूपी चौकीदार रहेगा तो बहुत सारी विपदाओं से, पतन के प्रसंगों से ऐसे ही बच जाओगे।

वाले को ठीक करना है तो अधिक से अधिक अपने को ही ठीक करने की जिम्मेदारी आ जायेगी।

ऐसा नहीं कि हमें गलती का पता नहीं चलता। परंतु सुख की लालच में गलती को गलती समझते हुए भी मन उसे रिहा करता रहता है। इससे आदत बिगड़ जाती है और होता आखिर में यह है कि हम महसूस करते हैं कि उस गलती के बिना हम जी नहीं सकते।

की हुई गलती फिर से न करे तो आदमी स्वाभाविक ही निर्दोष हो जाता है। की हुई गलती को फिर से न करना यह बड़ा पायश्चित्त है। गलती करता रहे और प्रायश्चित्त भी करता रहे तो इससे कोई ज्यादा फायदा नहीं होता। इससे तो फिर अंदर में ग्रंथि बन जाती है कि मैं तो ऐसा ही हूँ।

गलती निकालने के लिए जैसे दूसरे की गलती को जानते हो ऐसे ही ठीक अपनी गलती को जानने लगो तो विकास एकदम तेजी से होता है। इस प्रकार सुबह में अपनी गलती को निकालने का संकल्प करो। सद्‌गुरु ने जो मंत्र दिया है उसका जाप करो। मंत्र में स्थिति आ जाय इसके लिए त्रिबंध बहुत फायदा करेगा। अत: मंत्रजाप से पहले त्रिबंध करो। त्रिबंध इस प्रकार हैं :

मूलबंध : जैसे घोड़ा लीद छोड़कर बाद में अपना गुदाद्वार संकुचित करता है, ऐसा ही हमें करना है।

उड्डीयान बंध : नाभि को अंदर खींचना, उसे उड्डीयान बंध कहते हैं।

जालंधर बंध : ठुड्डी को कंठकूप में लगाना, उसे जालंधर बंध कहते हैं।

ये तीनों बंध करके प्राणायाम करो। जितने समय में श्वास लो उससे चारगुना समय साँस रोको और दुगुने समय तक धीरे-धीरे साँस छोड़ो। दाहिने नथुने से साँस लेकर रोकने के बाद बायें नथुने से छोड़ो। फिर बायें से साँस लेकर, रोककर दायें नथुने से साँस छोड़ो।

इस प्रकार दस प्राणायाम करो। इससे सुषुम्ना का द्वार खुलने में मदद मिलेगी। प्राणायाम करते समय माला साथ में रखो। साँस रोकने के समय गुरुमंत्र का जाप करो। गुरुमंत्र का अर्थ समझते हुए जाप करो। जैसे गोदाम में बिल्ली को बंद कर देने से वह चूहों की सफाई करके बाहर निकलती है ऐसे ही साँस रोककर जप करने से पुराने दुष्ट संस्कार बाहर निकलेंगे। साँस अंदर भरते समय ईश्वर और गुरु की कृपा को अंदर भरने का भाव करो और साँस छोड़ो तो अपनी जो कुछ बुरी आदतें या कमजोरियाँ हैं उन्हें बाहर निकालने का संकल्प करो। इस प्रकार के प्राणायाम से चिन्ता, बीमारी, चंचलता आदि भाग खड़े होंगे। इस प्रकार प्राणायाम के साथ एक माला पूरी कर लो।

अब सामने इष्टमूर्ति, गुरुमूर्ति है तो उसे एकटक देखते रहो। आँख की पलकें न हिलें तो अच्छा है। आँख की कीकी अचल रहे इस प्रकार पाँच मिनट तक एकाकार दृष्टि से देखते रहो। एकाग्रता बढ़ेगी, संकल्प शुद्ध और समर्थ होने में मदद मिलेगी। परंतु 'संकल्प शुद्ध हुआ कि न हुआ, शक्ति आयी कि न आयी' ऐसी परीक्षा कभी न करना। अन्यथा कमजोरी आ जायेगी। सफल होने पर अहंकार और विफलता आने पर संशय आ जायेगा या श्रद्धा चली जायेगी। श्रद्धा गई तो सब कुछ गया। साधक की बड़े से बड़ी गलती यह होती है कि कुछ शक्ति आ जाय तो उसका उपयोग करने लग जाता है या दूसरों को कहने लग जाता है। वह साधक जल्दी से गिर जाता है। कभी भी असाधक को अपना आध्यात्मिक अनुभव नहीं कहना चाहिए। किसी को ईश्वर के रास्ते बढ़ाने में सहयोगी हो सके ऐसा हो तो ऊपर ऊपर से थोड़ा-सा बता दो परंतु पूरा न बताओ।

ऐसा नहीं कि हमें गलती का पता नहीं चलता। परंतु गलती को गलती समझते हुए भी सुख की लालच में मन उसे रिहा करता रहता है। इससे आदत बिगड़ जाती है।

जितना तुम्हारे जीवन में संयम और वाणी में सच्चाई होगी उतनी

ही तुम्हारी और तुम जिससे बात करते हो उसकी आध्यात्मिक उन्नति होगी। तुम अगर सोचो कि हम खूब इधर उधर का बोलें और सामने वाला आदमी आध्यात्मिक हो जायेगा, तो ऐसा नहीं है। भले कछुए की चाल चलो परंतु 'सत्यमेव जयते।' सच्चाई में बड़ी शक्ति है। भले धीमी गति से धर्म का प्रचार हो परंतु ठोस होगा। ऐसे ऐसे संप्रदाय बने जिन्होंने राज्यसत्ता की शरण ली अथवा दिखावटी प्रचार-प्रसार की शरण ली और खूब जल्दी विकसित हो गये, फैल गये। लेकिन नष्ट भी ऐसे ही एकाएक हुए। नानक आदि सद्‌गुरु उच्च कोटि के महापुरुषों का प्रचार धीरे धीरे होते हुए जब गाड़ी गति में आयी तब फैला।

साधक की बड़े से बड़ी गलती यह होती है कि कुछ शक्ति आ जाय तो उसका उपयोग करने लग जाता है या दूसरों को कहने लग जाता है। वह साधक जल्दी से गिर जाता है।

तुम्हारी साधना जितनी होगी उतना ही तुम्हारे शरीर को स्पर्श करके बहनेवाली हवाएँ कुछ न कुछ पवित्र कार्य में सहायक हो जायेंगी और तुम्हें पता भी नहीं चलेगा। जो जितने गहराई में हैं उतना उन पुरुषों के सान्निध्य से हमें लाभ हो सकता है।

दूसरों को भगवान के दैवी कार्य में भले लगाओ परंतु साथ में अपना भजन-साधन छोड़ना नहीं। प्रारब्ध में जितना अन्न, धन, यश होता है, वह होकर रहता है। कपट का आश्रय लेने से अंतःकरण मलिन होता है और सत्य का सहारा लेने से अंतःकरण में सिंह जैसा बल आ जाता है। अतः कर्म में पुरुषार्थ, सच्चाई और विवेक को सदैव साथ रखो।

*

(पेज २५ से जारी....)

मुलाकात कर ले यह भी मनुष्य के हाथ की बात है।

राजन्! मूँछ भी आपकी और हाथ भी आपका, इससे मेरे भाग्य का कोई संबंध नहीं है। मेरा भाग्य मेरे हाथ में है। राजन्! मैं एक गिन्नी में संतुष्ट हो जाऊँ या न होऊँ यह भी मेरी समझ की बात है और किसीके कहने, धमकाने से मैं अपने को अभागा मानूँ या सत्संग की बात समझकर भाग्य-अभाग्य से परे आत्मा मानूँ यह मेरे हाथ की बात है। मैं अपने को भक्त मानकर भगवान के गुणगान करूँ यह मेरे हाथ की बात है। मैं अपने को कर्मी मानकर यज्ञ-यागादि सकाम कर्म करूँ यह मेरे हाथ की बात है। मैं निष्काम कर्मयोग करके अपना अंतःकरण शुद्ध करूँ यह भी मेरे हाथ की बात है।

राजन्! मैं उपासना करके हृदय को स्थिर करूँ, यह मेरे हाथ की बात है। मैं अपने भाग्य का आप विधाता हूँ।

कोउ काहुको नहीं सुख-दुःख करि दाता ।
निजकृत कर्म भोगहिं सब भ्राता ॥

कोई किसीके सुख-दुःख का दाता नहीं है। अपने ही कर्म, अपने ही विचार, अपनी ही बेवकूफी और अपनी ही कुशलता से आदमी सुखी दुःखी होता है। हमारे ही पुण्य-कर्म सत्पुरुषों के पास ले जाते हैं और हमारे ही दूषित कर्म हमें दूषित जगह पर ले जाते हैं। किसी राजा या सत्ताधीश या तथाकथित धनाढ्य लोगों के हाथ में भाग्य सौंपनेवाले खुशामतखोर भले ही ऐसे ही लोगों को अपना भाग्य-विधाता मान लें, वास्तव में मनुष्य का भाग्य मनुष्य के हाथ में है। वह जैसा कर्म और चिंतन करता है ऐसा ही उसका भाग्य बदलता रहता है। मूँछ भी आपकी, हाथ भी आपका, मेरे भाग्य का उससे कोई संबंध नहीं है। मेरा भाग्य मेरे हाथ में है।"

तुम भी अपने भाग्य के आप विधाता हो। भूतकाल में चाहे जैसे कर्म या चिंतन हो गया हो फिर भी घबराओ मत, चिंतित मत हो, धार्मिक कहलानेवाले अधिकांश धार्मिक लोग धर्म को, ईश्वर को या सत्पुरुषों को इतना नहीं समझ पाते, गहराई में इतने धार्मिक और सुखी नही होते जितने तुम हो या हो सकते हो। अपना भाग्य अपने हाथ में रखो। हताशा, निराशा, लघुताग्रंथि को अपने में मत आने दो।

* * *

मस्त सूफी संत मनसूर

दसवीं शताब्दी की एक करुणतम रक्तरंजित घटना !

अरबस्तान के जेलखाने में एक कैदी बन्द था। उसका नाम था मनसूर अल हल्लाज।

मनसूर ने आसपास देखा और एक कैदी को पास में बुलाया। उसको पूछा : "कितने कैदी हैं आप ?"

"लगभग तीन सौ।"

"मुक्त होना चाहते हैं ?"

"हाँ, हाँ।"

"तब सबको मेरे सामने इकट्ठा करो।"

सभी कैदी मनसूर की बैठक के सामने इकट्ठे हो गये। मनसूर थोड़े क्षणों के लिए ध्यानमग्न हो गये। फिर धीरे किन्तु दृढ़ स्वर में बोले :

"जाओ, तुम सभी मुक्त हो गये, जाओ।"

देखते ही देखते सभी निर्दोष कैदियों की हथकड़ियाँ खुल गईं। उन लोगों के आनंद तथा आश्चर्य की सीमा न रही। उन्होंने मनसूर से कहा : "प्रभु ! आप भी चलें।"

"नहीं, आप लोग जायँ।"

अद्‌भुत मस्ती थी उनकी आवाज में। ऊपर दृष्टि डालते हुए उन्होंने कहा : "मैं तो सर्वदा मुक्त ही हूँ। दुनिया की कोई भी जेल मुझे बंदी नहीं बना सकती।"

फिर कैदियों की ओर एक मीठी नजर डालते हुए बोले :

"जाओ, आप लोगों को अब तुरन्त ही यहाँ से निकल जाना चाहिए।"

सभी कैदी उन्हें प्रणाम करके भाग निकले। दूसरे दिन जेल के ताले टूटे हुए मिले। दरवाजे खुले पड़े थे। यह बात खलीफा के कानों तक पहुँची। वह तो क्रोधावेश में लालपीला होकर गर्जना करने लगा :

"सभी मुसीबतों की जड़ मनसूर ही है। उस दुष्ट को इस दुनिया से जल्दी ही बिदा कर दो।"

और... उनकी बिदा का दिन आ गया। इस क्रूरता और नृशंसता का खेल देखने के लिए लगभग एक लाख लोगों की भीड़ उनके चारों ओर इकट्ठी हो गई।

प्रथम कोड़े मारना आरंभ हुआ। एक... दो... तीन... पचास... सौ... दो सौ... तीन सौ...

कोड़े मारने की सजा पूर्ण हुई। रक्तरंजित मनसूर ने धीरे धीरे चारों ओर अपनी दृष्टि डाली। एक अलौकिक अद्‌भुत शान्ति उनके मुख पर छाई हुई थी। वे बोले :

"हक हक अनल हक।"

(उर्दू भाषा में 'हक हक अनल हक' का अर्थ है : 'भगवान एक और व्यापक है... और वह मैं हूँ।' साधना, ध्यान द्वारा अनुभूति के इस सर्वोच्च शिखर की अनुभूति मनसूर ने की थी।)

मनसूर का सेवक रो उठा और बोला :

"मुझे भी कुछ उपदेश दें।"

मनसूर ने अलौकिक मस्ती से कहा :

"किसी भी क्षुद्र अहं की शरणागति का कभी भी स्वीकार न करना।"

आँसुओं से भरी हुई आँखों से देखने वाले अपने पुत्र को उन्होंने संकेत से पास में बुलाया और कहा :

"संसार भौतिकता और नैतिकता के पीछे पागल है।

...और उसके बाद जो कुछ हुआ वह मानव इतिहास के पृष्ठों पर रक्तरंजित, शर्मजनक, हृदयविदारक घटना थी। मस्त फकीर मनसूर के हाथ काट दिये गये। एक तीक्ष्ण घाव उनके लथड़ते पैरों पर हुआ और दोनों पैर कटकर एक ओर जा गिरे। मनसूर का शरीर कटे हुए वृक्ष की तरह जमीन पर गिर पड़ा। खून की धाराएँ चारों ओर बहने लगीं। मनसूर ने जमीन पर फैले हुए खून के खड्डे में अपना मुँह रंगा और बोले : "देखो, मैं कितना प्रसन्न हूँ! शहीदों का गुलाल मैंने अपने मुँह पर लगाया है।"

दिव्य जीवन का एक क्षण भी देवदूतों और मनुष्यों के हजारों करोड़ों सत्कर्मों से भी श्रेष्ठतर है।"

इतना कहकर मनसूर हँसते हँसते वधस्थल की ओर आगे बढ़े। चाबुक की मार से शरीर लथड़ता था; किन्तु सिर ऊँचा था। लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा :

"आप अभी भी हँस रहे हैं?"

मनसूर ने कहा : "यही तो समय है मेरे हँसने का, प्रसन्न होने का। मैं तो अपने घर वापस जा रहा हूँ न!"

वधस्थल की सीढ़ियों को उन्होंने झुककर चुम्बन किया। ऊपर दृष्टि डालकर बोले :

"हे प्रभु! तूने मुझे वह सब दिया जो जो मैंने मांगा।"

जालिम खलीफा ने एकत्रित भीड़ को मनसूर पर पत्थर फैंकने का आदेश दिया। मनसूर शान्त भाव से दो पाँवों के बीच सिर रखकर बैठे ही रहे। एक भी चीख न निकली उनके मुख से। सूफी संत हजरत शिबली ने एक फूल उन पर फैंका। मनसूर ने उन पर दृष्टि डालते हुए कहा :

"ये पत्थर तो मुझे चोट नहीं पहुँचाते क्योंकि यह अज्ञानियों की भीड़ है; किन्तु आप! आप तो सब जानते ही हैं।"

...और उसके बाद जो कुछ हुआ वह मानव इतिहास के पृष्ठों पर रक्तरंजित, शर्मजनक, हृदयविदारक घटना थी।

मस्त फकीर मनसूर के हाथ काट दिये गये। वे हँस पड़े और बोले :

"आपने मेरे बाह्य हाथ भले काट डाले किन्तु आंतरिक हाथों से तो मैंने अभी भी अपने परमात्मा को छाती से दबा रखा है। उन हाथों को काटने में कौन समर्थ है?"

उसके बाद एक तीक्ष्ण घाव उनके लथड़ते पैरों पर हुआ और दोनों पैर कटकर एक ओर जा गिरे। मनसूर का शरीर कटे हुए वृक्ष की तरह जमीन पर गिर पड़ा। खून की धाराएँ चारों ओर बहने लगीं। लोग इस भीषण दृष्य को देखकर काँप उठे।

मनसूर ने अपने को संभालते हुए जमीन पर फैले हुए खून के खड्डे में अपने मुँह को रंगा और बोले :

"देखो, मैं कितना प्रसन्न हूँ! शहीदों का गुलाल मैंने अपने मुँह पर लगाया है।"

उसके बाद आँखें बंद करके उन्होंने प्रार्थना की :

"हे प्यारे! तू कितना दयालु है! तूने मुझे अंत समय तक उद्विग्न होने से बचाया। जो दृढ़ता और शान्ति तूने मुझे दी है वही मेरे चारों ओर घिरे हुए लोगों को देना मेरे प्रियतम!"

...और फिर एक बार उन पर पत्थरों की जोरदार मार आरंभ हो गई। वे खूब आहत हो गये थे और अंतिम श्वास ले रहे थे साधारण जन के लिए उनका अंतिम संदेश था :

"आप अद्वैत से, आत्मज्ञान से मित्रता करेंगे तो आप भी असाधारण बन जायेंगे।"

...और उसके बाद... उनकी चमकती आँखें तीक्ष्ण हथियार के द्वारा निकाल दी गई... पवित्र जीभ काट डाली गई। अंत में जब उनका सिर धड़ से अलग किया गया तब वे बहुत जोर से हँस पड़े और उसके साथ ही वह चिरप्रतिक्षित घड़ी आ पहुँची। एक छट्पटाते हुए परम प्रेमी का उसके महान् प्रेमास्पद के साथ अटूट मिलन हो गया। अमरता के गीतों का गुंजार करती एक सरिता सागर की विशाल छाती पर अपना सिर रखकर सदा के लिए अपनी रहस्यमय गहराई में खो गई।

उनके कटे हुए हाथ-पैरों में से, आँखों में से, जीभ और मस्तक में से तथा अंगों में से एक गंभीर ध्वनि सुनाई देती

जटिल लोग एवं जातियाँ ऐसे महापुरुषों के साथ दुर्व्यवहार करके मानवता को कलंकित करते आये हैं। हे जटिल लोगों! मनुष्यता के परम अधिकार दिलाने वाले महापुरुषों को समझने का पुण्य तथा बुद्धि ग्रहण करो। शाश्वत सुखी बनो और मुक्त हो जाओ। अनल हक, सोहं के अनुभव में आओ। हिंसा-घृणा, जटिलता बहुत हो चुकी। सच्चे हृदय से अपने सत्य स्वरूप को प्राप्त करने की शुरुआत करो।

थी : "अनल हक... अनल हक... अनल हक..."

उनकी अस्थियाँ जब दजला नदी में विसर्जित करने में आईं तब लोगों ने देखा कि अस्थियाँ नदी में एक जगह 'अनल हक' आकार के अक्षरों में संयोजित हो गई थीं।

...और इसके बाद तो मानो कि नदी को गुस्सा आया। नदी ने तो सीमा छोड़ी और पागल हो गई। हाल ही में मानो नगर का विनाश कर देगी; ऐसी बाढ़ आई। मनसूर ने पहले से ही सेवक को समझा दिया था कि ऐसा हो तब मेरा कोई वस्त्र नदी में विसर्जित कर देना। सेवक ने ऐसा ही किया। नदी शान्त हो गई। अश्रुभरी आँखों से तथा शोकयुक्त हृदय से उनके शिष्यों ने उन पावन अस्थियों को दफना दी।

एक छटपटाते हुए परम प्रेमी का उसके महान् प्रेमास्पद के साथ अटूट मिलन हो गया। अमरता के गीतों का गुंजार करती एक सरिता सागर की विशाल छाती पर अपना सिर रखकर सदा के लिए अपनी रहस्यमय गहराई में खो गई।

एक महान संत को इतनी क्रूरता से बिदा दी गई?

तत्कालीन शासकों और लोगों की दृष्टि में मनसूर का एक ही अपराध था : 'अनल हक' का उद्‌घोष। वे अपने आप को ईश्वर कहने लग गये थे।

मनसूर ने सचमुच कोई अपराध नहीं किया था। वे ईश्वर से, सर्वव्यापक चेतना से इतने अधिक एकाकार हो गये थे कि उनका देहाध्यास पिगल गया था। ऐसी मानसिक स्थिति में ही उन्होंने अपने लिए 'अनल हक' की घोषणा की थी। यह घोषणा इतनी सत्य, प्रामाणिक एवं प्रभावशाली थी कि मृत्यु के बाद भी उनके एक एक अंग से तथा अस्थियों में से 'अनल हक' का गुंजन सुनाई देता था।

मनसूर की जीवन-कथा के समकालीन लेखक तथा इरान के सूफी कवि ने लिखा है :

"अत्यन्त दुःख की बात यह है कि अपने समकालीन इतने महान संत को कोई समझ न सका। अगर किसी वृक्ष में से 'अनल हक' की आवाज सुनाई दे तो आप उसे पूजने लगेंगे। परन्तु कोई मनुष्य कहेगा तो आप उसे शूली पर लटका देंगे। जब कोई महान व्यक्ति इन शब्दों का उच्चारण करते हैं तब वे अपने व्यक्तित्व से परे सर्वोच्च भाव-समाधि की स्थिति में होते हैं। तब वे नहीं किन्तु अस्तित्व ही उनके मुख से बोलता है।

जटिल लोग एवं जातियाँ ऐसे महापुरुषों के साथ दुर्व्यवहार करके मानवता को कलंकित करते आये हैं। ऐसे महापुरुष मानव समाज को अपने 'अनल हक' के उच्च शिखरों पर, आत्मज्ञान के उच्च अनुभवों पर ले जाने के लिए भिन्न भिन्न समय, अलग अलग स्थानों पर प्रगट होते ही रहते हैं।

हे मानवता को कलंकित करनेवाले जटिल लोगों! मनुष्यता के परम अधिकार दिलाने वाले महापुरुषों को समझने का पुण्य तथा बुद्धि ग्रहण करो। शाश्वत सुखी बनो और मुक्त हो जाओ। अनल हक, सोहं के अनुभव में आओ। हिंसा, घृणा, जटिलता बहुत हो चुकी। सच्चे हृदय से अपने सत्य स्वरूप को प्राप्त करने की शुरुआत करो। मनसूर तो अभी भी लोगों के हृदयों में विराजमान हैं किन्तु वे दुर्जन और संत को न समझने वाले अभागे किस नरक में और किस नाली में सड़ते होंगे, यह तो राम ही जाने!

अनल हक, सोहं... सोहं... गायेजा,
अपने स्वरूप को पायेजा।

"अगर भारत की फिर से उन्नति होनेवाली है तो वह केवल धर्म के द्वारा ही होगी। भारत पर समाजवादी और राजनैतिक विचार थोप देने से पहले उसमें आध्यात्मिक विचारों की बाढ़ बहाने का कार्य प्रथम करो। भारतराष्ट्र का जीवन धर्म की नींव पर निर्मित है। परंपरागत आदर्शों को दफनाकर नये आदर्शों का महल खड़ा करने का कोई भी प्रयत्न राष्ट्र के विनाश में परिणत होता है। पाश्चात्य वानरीकरण बन्द करके ऋषिपरंपरा अपनाओ। हे भारत! जागृत हो। छोड़ दे अनिष्टकारी भविष्य को..." – *स्वामी विवेकानन्द*

चिन्ता और चिन्तन

साधन-काल में एकान्तवास अत्यन्त आवश्यक है। भगवान बुद्ध ने छः साल तक अरण्य में एकान्तवास किया था। जिसस भारत में आकर १७ वर्ष तक एकान्तवास में रहे थे। श्रीमद् आद्य शंकराचार्य ने नर्मदा तट पर सद्‌गुरु के सान्निध्य में एकान्तवास में रहकर ध्यानयोग, ज्ञानयोग इत्यादि के उत्तुंग शिखर सर किये थे। उनके दादागुरु गौड़पादाचार्य ने एवं सद्‌गुरु गोविन्दपादाचार्य ने भी एकान्त सेवन किया था, अपनी वृत्तियों को इन्द्रियों से हटाकर अन्तर्मुख की थी।

संतवाणी

अन्तःकरण की दो धाराएँ होती हैं : एक होती है चिन्ता की धारा और दूसरी होती है चिन्तन की धारा, विचार की धारा।

जिसके जीवन में दिव्य विचार नहीं है, दिव्य चिन्तन नहीं है वह चिन्ता की खाई में गिरता है। चिन्ता से बुद्धि संकीर्ण होती है। चिन्ता से बुद्धि का विनाश होता है। चिन्ता से बुद्धि कुण्ठित होती है। चिन्ता से विकार पैदा होते हैं।

जो निश्चिंत हैं, वे शराब नहीं पीते। जो विचारवान हैं वे फिल्म की पट्टियों में अपना समय बरबाद नहीं करते।

स्वामी माधवतीर्थ कहते थे कि सौ वेश्याओं के पास जाना उतना हानिकर्त्ता नहीं जितना फिल्म में जाना हानिकर्त्ता है। वेश्या के संग में तो दिखेगा कि हानि है लेकिन फिल्म के गहरे संस्कार में पता ही नहीं चलता कि हानि हो रही है। फिल्म में जो दिखता है वह वास्तव में सच्चा नहीं है फिर भी हृदय में जगत की सत्यता और आकर्षण पैदा कर देता है। फिर हृदय में अभाव खटकता रहेगा। अभाव खटकता रहेगा तो चिन्ता के शिकार बन जायेंगे। चलचित्र विचार करने नहीं देंगे, भोगेच्छा बढ़ा देंगे। भोगेच्छा से आदमी का विनाश होता है।

जिसके जीवन में दिव्य विचार नहीं है, दिव्य चिन्तन नहीं है वह चिन्ता की खाई में गिरता है। चिन्ता से बुद्धि संकीर्ण होती है। चिन्ता से बुद्धि का विनाश होता है। चिन्ता से बुद्धि कुण्ठित होती है। चिन्ता से विकार पैदा होते हैं।

विचारवान पुरुष अपनी विचारशक्ति से विवेक-वैराग्य उत्पन्न करके वास्तव में जिसकी आवश्यकता है उसे पा लेगा। मूर्ख आदमी जिसकी आवश्यकता है उसे समझ नहीं पायेगा और जिसकी आवश्यकता नहीं है उसको आवश्यकता मानकर अपना अमूल्य जीवन खो देगा। उसे चिन्ता होती है कि, 'रूपये नहीं होंगे तो कैसे चलेगा? गाड़ी नहीं होगी तो कैसे चलेगा? अमुक वस्तु नहीं होगी तो कैसे चलेगा?' उसे लगता है कि 'अपने रूपये हैं, अपनी गाड़ी है, अपने साधन हैं... हम स्वतंत्र हैं। आपके पास गाड़ी नहीं है तो आप परतंत्र हो गये... रूपये-पैसे नहीं हैं तो आप परतंत्र हो गये।'

उन बेचारे मंद बुद्धिवाले लोगों को पता ही नहीं चलता कि रूपये-पैसे से स्वतंत्रता नहीं आती। रूपये-पैसे हैं तो आप स्वतंत्र हो गये... तो क्या यह रूपये-पैसों की परतंत्रता नहीं हुई? गाड़ी की, बंगले की, फ्लेट की, सुविधाओं की परतंत्रता ही हुई। इन चीजों की परतंत्रता पाकर कोई अपने को स्वतंत्र माने तो यह नादानी के सिवाय और क्या है? वास्तव में रूपये-पैसे, गाड़ी, मकान आदि सब तुम्हारे शरीर रूपी साधन के लिये चाहिए। साधन के लिये साधन चाहिए। तुम्हारे लिये इन चीजों की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम वास्तव स्वरूप में परम स्वतंत्र हो। तुमको अपने ज्ञान की ही आवश्यकता है। अपना ज्ञान जब

तक नहीं होगा तब तक तुम अपने साधन (शरीर) की आवश्यकता को अपनी आवश्यकता मान लोगे। अतः विवेक, वैराग्य एवं एकान्तसेवन कर ध्यान एवं ज्ञानयोग द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त करने को ही अपने जीवन का ध्येय बनाना चाहिए।

विचारवान पुरुष अपनी विचारशक्ति से विवेक-वैराग्य उत्पन्न करके वास्तव में जिसकी आवश्यकता है उसे पा लेगा। मूर्ख आदमी जिसकी आवश्यकता है उसे समझ नहीं पायेगा और जिसकी आवश्यकता नहीं है उसको आवश्यकता मानकर अपना अमूल्य जीवन खो देगा।

*

अपना भाग्य अपने हाथों में

एक राजा था। राजाओं के भी अपने अपने शौक होते हैं। उस राजा के दरबार में कई गायक, कवि, भाट, चारण अपनी अपनी कृति प्रस्तुत करते थे। उनको जब राजा पुरस्कार देना चाहता, ईनाम देना चाहता तब वह अपनी मूँछ पर हाथ घुमाता। हाथ में जितने बाल आ जाते उतनी ही गिन्नियाँ पुरस्कार रूप से दी जाती।

एक दिन किसी वेदान्ती गुरु का शिष्य, सच्चे संत का सत्‌शिष्य कवि राजा के दरबार में पहुँच गया। उसने अपनी कविता सुनाई। उसमें नीतिमत्ता की बात तो थी ही, परंतु उससे ऊपर आत्मा-ब्रह्म के एकत्व की सर्वोपरि सीख भी उस कविता में भरी थी। धर्म, ज्ञान, वैराग्य की बातें थी। निर्भीकता के अंश उस कविता में प्रगट होते थे। मानो वेदान्ती कविता थी। ऐसी कविता सुनकर सभा के लोग 'साधु साधु... वाह वाह !' करने लगे, बड़े प्रसन्न हुए। राजा भी खुश हुआ। अब कवि को ईनाम देने की बारी आई। वही पुरानी आदत, राजा मूँछ ऐंठने लगा। उसकी दो अंगुलियों में एक ही बाल आया। राजा ने कहा :

"कवि, तेरी कविता तो बहुत बढ़िया है। परंतु तेरा भाग्य फूटा हुआ है। मेरे हाथ में सिर्फ एक ही बाल आया। तुम्हें एक गिन्नी ईनाम में मिलेगी, ले जाओ।

"राजन्! मूँछ भी आपकी, हाथ भी आपका। इससे मेरे भाग्य का क्या सम्बन्ध है? भाग्य तो मेरा तब माना जायेगा जब मूँछ आपकी हो और हाथ मेरा हो। तब पता चलेगा कि मेरा भाग्य कैसा है।

कविता तो तुमने बहुत अच्छी गायी परंतु भाग्य तुम्हारा अच्छा नहीं है। भाग्य फूटा हुआ है। कविता तो पूरी थी मगर भाग्य अधूरा है।"

कवि स्पष्टवक्ता और निर्भीक था। उसने कहा : "राजन् ! मूँछ भी आपकी, हाथ भी आपका। इससे मेरे भाग्य का क्या सम्बन्ध है ? भाग्य तो मेरा तब माना जायेगा जब मूँछ आपकी हो और हाथ मेरा हो। तब पता चलेगा कि मेरा भाग्य कैसा है।

राजन् ! यह ध्यान से सुन लो। मनुष्य का भाग्य उसके हाथ में है। मनुष्य अपने भाग्य का आप विधाता है। मनुष्य चाहे तो संसार की वस्तुओं को 'मेरी - मेरी' करते करते, संसार का चिंतन करते-करते अपने भाग्य को नासुर कर दे। बार-बार जन्मे और बार-बार मरे। चाहे तो संसार की वस्तु संसार की समझकर ईश्वर के दैवी कार्यों में उसका यथायोग्य सदुपयोग करे, ईश्वर का प्यारा हो जाये। चाहे तो किसी की निंदा सुने और करे, अपने पुण्य नष्ट करे और चाहे तो निन्दा-स्तुति से पार सत्कर्म करे और कराये, अपना भाग्य बनाये। मनुष्य चाहे तो यज्ञ-याग, होम-हवन करके स्वर्ग का पासपोर्ट बना ले। चाहे तो इष्ट का स्मरण, जप-तप करके इष्टलोक तक की अपनी यात्रा मुकरर करा ले। इससे भी आगे अगर चाहे तो कल्पित देवी-देवता नहीं, मरने के बाद स्वर्ग नहीं, परंतु जीते जी शाश्वत सुख देने वाले किसी सद्‌गुरु को खोज ले। उनका सत्संग-श्रवण करके अपनी बुद्धि को विकसित करे। सुख-दुःख में सम रहने की कला पाकर अपने आत्मसिंहासन पर विराजे। सद्‌गुरुओं के संकेत समझकर सत्य स्वरूप का साक्षात्कार करके परमात्मा की

(अनु. पेज २० पर)

शरीर स्वास्थ्य

शरद ऋतु में दूध का विशिष्ट उपयोग

वर्षा ऋतु में संचित हुआ पित्त शरद ऋतु में प्रकोप प्राप्त करता है। उसका शमन करने के लिए शरद ऋतु में दूध का आहार लेना चाहिए। गरम प्रकृतिवाले तथा पित्त प्रकृतिवाले के लिए तो अत्यन्त उपयोगी है। इसी कारण से श्राद्ध पक्ष में दूध-भात की क्षीर का भोजन पितृओं के बहाने सभी खायँ; ऐसी व्यवस्था अपने ऋषि-मुनियों ने की है। शरदपूर्णिमा की रात में भी चंद्र की चाँदनी में ठंडे किये हुए दूध-चूड़ा खाने का रिवाज है। इसका हेतु भी पित्तशमन ही है।

शरद ऋतु में पालन करने योग्य नियम

भाद्रपद तथा आश्विन इन दो महीनों में अर्थात् वर्षा ऋतु के बाद आनेवाली शरद ऋतु में निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिये :

क्षारयुक्त, खट्टे, तीखे तथा गरम पदार्थ नहीं खाना।

दिन में सोना नहीं।

दही का सेवन नहीं करना।

गाय के घी का यथायोग्य सेवन करना।

मीठे, फीके, कड़वे पदार्थों का विशेष सेवन करना।

अपने अनुकूल हो ऐसी वस्तु डालकर अथवा अकेला दूध लेना।

श्वेत और स्वच्छ गन्ना लेना।

गेहूँ, जौ, मूंग तथा चावल लेने।

'अंशुदक' अर्थात् जिस जल पर दिन में सूर्य की किरणें पड़ें तथा रात में चन्द्र की किरणें पड़े; वह पानी ग्रहण करना।

यह 'अंशुदक' शरीर के जोड़ों में और आँतों में चिकनापन बनाये रखता है।

वृद्धों के लिए पौष्टिक प्रयोग

दूध में चावल को पकाकर खाने से शरीर में 'ओजस' की वृद्धि होती है। इससे वृद्धावस्था में रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। वृद्धावस्था की गति कम होती है। स्मरण शक्ति और मन की नियंत्रण की शक्ति बढ़ती है। भगवान आत्रेय ने भी अपने ग्रंथ चरक संहिता में ऐसा उपदेश किया है।

सामान्य तरह से अपनी पाचन शक्ति के अनुसार आधी कटोरी चावल लेना। उसे दो-तीन बार धोकर उसी कटोरी के माप के अनुसार तीन-चार कटोरी गाय का दूध लेना। आवश्यक लगे तो उसमें थोड़ा पानी डालना। संभव हो तो गाय का दूध ही लेना। उसमें हलदी, अश्वगंधा ५ से १० ग्राम अपनी प्रकृति के अनुसार डाल सकते हैं। शक्कर आवश्यक लगे तो थोड़ी डालना। उसके बाद ये चावल और दूध, आवश्यक लगे तो पानी, अश्वगंधा, शतावरी, हलदी, इन सबको मिलाकर धीमे ताप से उबालना। जब चावल के दाने पक जायँ तब आग बुझा कर १५-२० मिनट सीझने देना। अश्वगंधा का सर्दी में तथा शतावरी का गरमी में उपयोग अधिक लाभकारी है। ब्रह्मचारियों को इनका नियमित उपयोग नहीं करना चाहिये। कभी कभी कर सकते हैं।

इस तरह दूध में पकाये हुए चावल का उपयोग दोपहर के समय में ही करना। ये चावल सीझ जायँ तब २०-३० मिनट में ही उपयोग कर लेना चाहिये। बासी बनने नहीं देना ताकि खुराक में सात्त्विकता बनी रहे। इसके साथ रोटी, सब्जी आदि कुछ भी न लेना जिससे विरुद्ध आहार न हो।

भोजन से आधा घंटा पूर्व अपनी प्रकृति के अनुसार अदरक के चार-पाँच टुकड़े लेना जिससे दोपहर के समय इस तरह से दूध में पकाये हुए चावल तुरन्त ही पच जायँ। यहाँ चावल जितने पुराने होंगे, बिना पोलीश के होंगे, उतना अधिक लाभ होगा।

भगवान आत्रेय ने गर्भिणी स्त्री के लिए आठवें महीने इस खुराक को लेने का उपदेश किया है जिससे बालक और माता में ओज का परिमाण और रोगप्रतिकारक शक्ति बराबर बनी रहे। मुख्यत: ४५ वर्ष से बाद की आयुवाले तथा जो लोग रसायण का प्रयोग करते हैं उन्हें इस दूध में पकाये हुए चावल का आहार अत्यन्त उपयोगी है। फिर भी कोई भी व्यक्ति इस आहार का उपयोग कर सकता है।

कोई भी व्यक्ति तथा मुख्यत: गर्भिणी स्त्री को इस आहार का उपयोग करना हो तो किसी सात्त्विक वैद्य की

निगरानी में रहकर इसका उपयोग करना चाहिये। अपने अनुकूल आ जाय तो धीरे-धीरे थोड़ी-थोड़ी मात्रा बढ़ा सकते हैं।

पूर्णिमा, अमावास्या, एकादशी के दिनों में ऐसा आहार न लेकर मूंग, मूंग की दाल, मूंग का पानी लेना चाहिये; कारण कि इन दिनों में मनुष्य सहित सभी जीवों की पाचनशक्ति, प्राणशक्ति कमजोर हो जाती है। हमारे ऋषियों ने इसी कारण से उपवास को महत्त्व दिया है। कितनी सूक्ष्म दृष्टि!

दूध के शत्रु अथवा दूध के विरोधी द्रव्य

मूंग, मूली, गुड़, मछली, मांस के साथ लिया हुआ दूध कोढ़ उत्पन्न करता है। प्रत्येक सब्जी, जामुन, शराब के साथ लिया हुआ दूध अज्ञानी मानव को सर्प की तरह मार डालता है।

प्रवाही या प्रवाही न हो ऐसे प्रत्येक गरम पदार्थ को दूध के साथ मिला कर नहीं खाना चाहिये। उसी तरह से हरे शाकभाजी, तेल, तल की खली, सरसव, कोठफल, जामुन, नींबू, कटहल, बिजोरु, बांस का फल, बोर, खट्टा अनार ऐसा दूसरा कोई भी फल खास करके खट्टे आम जैसा फल तथा बिल्व फल दूध के साथ विरोधी होने से एक साथ खाया नहीं जाता। अगर ये चीजें दूध के साथ खाई जायँ तो बहरापन, अंधापन, शरीर में विवर्णता फीकापन, मूकपन आदि आते हैं और किसी समय मृत्यु भी होती है। पीसे हुए आटे के पदार्थ, आचार के साथ दूध का सेवन नहीं करना चाहिये।

दूध के मित्र

शहद, घी, मक्खन, अदरक, पीपर, कालीमिर्च, मिश्री या शक्कर, चूड़ा, परवल, सूंठ और हरड़े इतने द्रव्य में से कोई भी एक द्रव्य दूध के साथ लिया जाय तो यह उत्तम है।

दूध कब न पीना?

नया बुखार, कमजोर पाचन शक्ति, मन्दाग्नि में, आँव के दोष में, कोढ़ के रोगी को, चर्मरोग वाले को, कफ के रोग में, खाँसी में, अतिसार (दस्त) वाले रोगी को दूध नहीं पीना चाहिये। प्रत्येक प्रकार का दूध कृमि-दोष उत्पन्न करता है। अत: कृमि रोग वाले व्यक्ति को मुख्यत: दूध का सेवन नहीं करना चाहिये।

जो दूध गरम न किया गया हो तो इसे कभी भी नहीं पीना चाहिये।

पीपल का मुरब्बा

पीपल के कोमल नये पत्ते उबालकर, गलकर इसमें चीनी मिलाकर चासनी करना। फिर इसमें पीपल के नये कोमल पत्तों का कल्क (चूर्ण) डालकर उसका मुरब्बा बनाना। इस मुरब्बे को खाने से रक्तविकार, रक्तपित्त, मंदाग्नि, पीलिया, सूजन, उरःक्षत एवं सूखी खाँसी मिटती है। यह मुरब्बा बंगभस्म, लोहभस्म या सुवर्णभस्म से भी अधिक शक्ति देता है।

वीर्यवर्धक गुटिका

तुलसी के बीज और समान भाग का गुड मिलाकर छोटे बैर जैसी गोलियाँ करके, सुबह शाम एक एक गोली लेकर ऊपर से गाय का दूध पीने से (इस तरह चार मास लेने से) नपुंसकता दूर होती है, वीर्य बढ़ता है, नसों में शक्ति आती है, पाचनशक्ति सुधरती है और कैसा भी निराश हुआ पुरुष पुनः सशक्त होता है। 'यौवन सुरक्षा' (संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-५ द्वारा प्रकाशित) पुस्तक का अध्ययन करना आवश्यक है।

*

योगयात्रा

प्रिय वाचक बंधुओं तथा भगिनीओं!

हरि ॐ। परम पूज्य बापू का स्मरण और नाम-मंत्र कितना चमत्कारी औरं प्रभावशाली सिद्ध हुआ; इसकी स्वानुभूति मैं आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ।

घटना अभी-अभी गत महीने की ही है। औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में मुझे एक मकान मेरे माता-पिता के देहान्त के बाद बिरासतपत्र के अनुसार मिला था। मैं सपरिवार अहमदाबाद में ही नौकरी के कारण, बच्चों की पढ़ाई के कारण पिछले १६-१७ साल से स्थायी हो गया हूँ। भविष्य में भी औरंगाबाद में स्थायी होने के लिये कोई विचार नहीं था। इसलिए वहाँ का मकान बेचने का विचार था। मकान मजबूत और बड़ा था लेकिन पुरानी

श्रद्धालु वाचकों से अनुरोध करता हूँ कि महत्त्व के निर्णय लेने से पहले, मुश्किल समस्या सुलझाने से पहले मन ही मन माधुर्यदाता, सब जगह सहायक होनेवाले संत शिरोमणी का स्मरण और सत्संग करो। जो सारे दुःखों से छुड़ा कर परमात्मा तक पहुँचा देते हैं ऐसे गुरुदेव के पावन नाम की धून सच्चे हृदय से करो, नाम-कीर्तन करो। इससे आपके शुभ संकल्प अवश्य सिद्ध होंगे।

बस्ती में होने के कारण मनचाही किंमत नहीं मिल रही थी। उचित मूल्य पाने के लिये गत दो वर्ष से प्रयत्न चल रहे थे लेकिन कोई सफलता नहीं मिल रही थी।

मेरे सद्भाग्यवश प. पू. आसाराम बापू का कुछ साहित्य पढ़ने में आया। मैं काफी प्रभावित हुआ और भूखे आदमी की तरह पूज्यश्री का साहित्य जहाँ-जहाँ से मिले वहाँ से लाकर पढ़ने लगा। धीरे-धीरे मोटेरा आश्रम (अहमदाबाद में) जाने की इच्छा हुई। वहाँ जाने के बाद 'बड़ बादशाह' के सामने खड़े होकर 'मेरा औरंगाबाद का मकान उचित मूल्य में बिक जाए तो मैं... करूँगा' ऐसा संकल्प किया, मनौती मानी। यह सब मार्च '९२ के आसपास हुआ। इस दौरान घर में पू. आसाराम बापू के फोटो के सामने मन ही मन 'बापू ! कुछ करो... कुछ फैसला जल्दी लाओ...' ऐसी प्रार्थना करता ही रहा।

मई '९२ में कुछ अचानक ही मन में विचार आया कि चलो, औरंगाबाद ८-१० दिन के लिये जाकर घर भी देखकर आएँगे और संजोगवशात् कोई ग्राहक मिल जाए तो मामले का निबटारा कर देंगे।

औरंगाबाद जाते समय मैं मन ही मन पू. बापू की कृपा की याचना करता था। टी.वी. सीरियल नरसीं मेहता में आयी हुई धून 'राधेश्याम - राधेश्याम' की तर्ज में मैं 'सद्गुरुदेव आसाराम... सद्गुरुदेव आसाराम...' यह धून मन ही मन गाने लगा। पू. बापू ने मुझे केवल चार ही दिनों में प्रत्यक्ष परचा बता दिया और दो साल से मुश्किली में पड़ा हुआ काम चमत्कारिक रूप से पूरा कर दिया।

मैं औरंगाबाद पहुँचा। शाम को ही ग्राहक आया। मेरा मकान नगद पैसों में बिक गया। सालों का काम दो-चार दिन में पूरा करके मैं अहमदाबाद में आ गया।

मैं प. पू. बापू की असीम कृपा के लिये ऋणी और कृतज्ञ हूँ। श्रद्धालु वाचकों से अनुरोध करता हूँ कि महत्त्व के निर्णय लेने से पहले, मुश्किल समस्या सुलझाने के पहले मन ही मन माधुर्यदाता, सब जगह सहायक होनेवाले संत शिरोमणि का स्मरण और सत्संग करो। जो सारे दुःखों से छुड़ाकर परमात्मा तक पहुँचा देते हैं ऐसे गुरुदेव के पावन नाम की धून सच्चे हृदय से करो, नाम-कीर्तन करो। इससे आपके शुभ संकल्प अवश्य सिद्ध होंगे।

आपका
प्रभाकर विद्वांस
हेमेन्द्र पार्क, इसनपुर, अहमदाबाद।

*

सेवाधारी साधक नियुक्ति

प्राणीमात्र के परम हितैषी परम कृपालु पूज्यपाद सद्गुरुदेव के और ईश्वर के दैवी कार्य में सम्मिलित होकर शहर-शहर, गाँव-गाँव और मुहल्ले-मुहल्ले में ऋषियों के प्रसाद रूप इस 'ऋषि प्रसाद' सामयिक का प्रचार एवं प्रसार करने की सेवा का लाभ लेने के उत्सुक सेवाधारी साधक भाईबहन 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय का रूबरू या पत्र से सम्पर्क करें। इन सेवाधारी एजन्ट साधक भाई-बहनों को कम से कम २५ सदस्य बनाने होंगे और/अथवा अपने क्षेत्र के, गाँव के सदस्यों को प्रति दो माह अंकों का वितरण नियमित रूप से करना होगा। अंक वितरण की सेवा न हो सके तो यह सेवा कार्यालय द्वारा होगी। फीलहाल तात्कालिक वर्तमान सदस्यों के अंकों के वितरण के लिए निम्नलिखित स्थानों में सेवाधारियों की नियुक्ति करनी है : (१) **उत्तरप्रदेश :** कानपुर, गाजीयाबाद, आगरा, अलाहाबाद (प्रयाग), बनारस, गोरखपुर, झाँसी, मथुरा, वृन्दावन, हरिद्वार, ऋषिकेष, लखनऊ, नैनीताल, बरेली, जलान, रायबरेली, फैजाबाद।(२) **मध्यप्रदेश :** उज्जैन, नागदा, तराना, उनरेल, खाचरोद, भोपाल, जबलपुर, इन्दौर, अलीराजपुर, झाबुआ, मन्दसौर, नीमच, रायगढ़, धार, मनावर, अमझेरा, पीथमपुर, अंजड़, बड़वानी, सनावद, सैंधवा, खण्डवा, बुरहानपुर, गुना, ग्वालियर, लश्कर, रायपुर, राजगढ़, शिवपुरी, विदिशा, सारंगपुर, महु, सानवेर, सीहोर, बैरागढ़, बड़वाह, रतलाम, जावरा। (३) **राजस्थान :** जयपुर, जोधपुर, कोटा, उदयपुर, माण्डल, भीलवाड़ा, सुमेरपुर, पाली, अजमेर, बीकानेर, ब्यावर, अलवर, चित्तोड़गढ़, प्रतापगढ़, सागवाड़ा, डुंगरपुर। (४) **हैदराबाद। सिकन्दराबाद। मद्रास। बैंगलोर। गौहाटी। कलकत्ता। पूना। बम्बई।**

संस्था समाचार

अहमदाबाद आश्रम के प्रांगण में सबसे विशेष महत्त्वपूर्ण पर्व... भक्तों, साधकों एवं शिष्यों के विशाल समुदाय से आश्रम के प्रांगण का उभरता हुआ पर्व आया गुरुपूर्णिमा महोत्सव... सद्गुरु और शिष्यों के भावपूर्ण मिलन का पर्व... शिष्यों के समर्पण एवं सद्गुरु की असीम अहैतुकी कृपादृष्टि का प्रसंग... मात्र गुजरात से ही नहीं किन्तु कश्मीर से कन्याकुमारी तथा सोमनाथ से गंगासागर तक के प्रदेश में फैले हुए अनगिनत गुरुभक्तों और साधकों के अद्भुत स्नेहमिलन का यह पर्व... दुबई, होंगकोंग, युरोप, अमेरिका तथा जर्मनी से भक्त लोग आकर बिना चूके जुड़ गये, ऐसा यह महिमावान पर्व...

१४ जुलाई को गुरुपूर्णिमा महोत्सव था। १२वीं रविवार को परम पूज्य सद्गुरुदेव हिमालय के एकान्तवास के बाद अहमदाबाद आश्रम पधारे। सत्संग, कीर्तन, ध्यान के कार्यक्रम तारीख १२ से १५ तक चलते रहे।

ता. १४ जुलाई के दिन गुरुपूर्णिमा के लिए उमड़ती हुई विशाल मानवमेदनी के आवास, भोजन, सुरक्षा, यातायात की व्यवस्था स्नेहसहित प्रीतिपूर्वक की गई।

गुरुपूर्णिमा के दिन गुरुपूजन का लाभ लेने से कौन वंचित रहे? सभी के अंतर की दृढ़ इच्छा होती है। प्रातः ३ बजे से गुरुदर्शन की राह देखते, तपस्या करते हुए भक्तों तथा साधकों को दर्शन देने प्रातः सात बजे सर्वान्तर्यामी श्री सद्गुरुदेव ध्यान-समाधि की, निजानंद की मस्ती की वर्षा करते हुए जब व्यास भवन में पधारे तब मात्र व्यास भवन ही नहीं किन्तु आश्रम का विशाल प्रांगण भक्तों से खचाखच भर गया था। बड़ बादशाह के आसपास का मैदान और ठेठ मुख्य प्रवेशद्वार तक का समग्र विस्तार भी भक्तों से भरपूर हो गया था।

पूज्य बापू अपनी फकीरी मस्ती में पधारे... सबके हृदय में अनुपम शान्ति और नेत्रों को तृप्ति देते हुए... सुहावनी गति से सबके हृदयों को आकर्षित करते हुए... आश्रम के प्रांगण के ठेठ अन्त तक, जहाँ तक भक्त बैठे थे वहाँ तक चल कर गये और सभी को दर्शन दिये।

श्री गुरुदेव की आत्मसूझ, उदारता, करुणा एवं अमृतवाणी सचमुच प्रसंगोचित ही होती है।

गुरुपूर्णिमा का प्रासंगिक प्रवचन हुआ और उसके बाद ठेठ शाम के पाँच बजे तक गुरुदर्शन करने के लिए भक्तों और साधकों की पंक्तियाँ चलीं। गत वर्ष व्यासपीठ के समीप जाकर गुरुदर्शन-पूजन करने के लिए आठ घंटों के बाद नंबर आता था। इस बार दो कतारें करने से चार घंटों में ही गुरुदर्शन-पूजन का अनुपम अवसर मिल जाता था। फिर भी सभी भक्तों का पूजन-कार्य पूर्ण होते-होते रात्रि के नौ बज ही गये। भक्तों की कतारें आश्रम के डामर के एप्रोच रोड़ को पार कर ठेठ हाइवे तक लम्बी हो गई थीं।

गुरुपूर्णिमा महोत्सव के चार दिन खूब आनंदपूर्वक और शीघ्रता से बीत गये। उसके बाद अहमदाबाद के आश्रम में ही पूज्यश्री ने २८ जुलाई तक एकान्तवास किया। प्रत्येक दिन शाम को और कभी कभी दोपहर मध्याह्न संध्या के समय सभी को पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग का लाभ प्राप्त होता। तारीख २८ जुलाई की रात में हवाई मार्ग से पूज्यश्री इन्दौर पधारे।

पूज्यश्री इन्दौर में

इन्दौर में बिलावली तालाब के किनारे स्थित एकान्त आश्रम पूज्य बापू को अज्ञातवास के लिए बहुत अनुकूल लगता है। प्रत्येक दिन शाम को और रविवार को दोपहर में जनता की दर्शन-सत्संग की प्यास तृप्त होती है।

इन्दौरवासी और समग्र मध्यप्रदेश के भक्त पूज्यश्री के पावन दर्शन के लिए उमड़ पड़े। प्रत्येक दिन शाम को ५ से ७ बजे तक इन औलिये सत्पुरुष की आत्मस्पर्शी वाणी और आनंद के अमृत बरसाने वाली प्रेम भरी दृष्टि में नहाते सप्ताह से भी अधिक समय कैसे बीत गया; इसका ध्यान ही न रहा। इन औलिये महापुरुष को स्नेहभिगी फिर भी दर्दभरी विदाई देते हुए भक्तों की आँखों ने जिस भक्ति के अमृतबिन्दु के समान आँसू बहाये होंगे; इसका वर्णन यह कलम क्या कर सकती है? धन्य है इन्दौर की जनता को कि जो रविवार की मूसलाधार वर्षा में भी कीचड़ की परवाह किये बिना इतनी बड़ी संख्या में घंटों तक तपस्या करती रही... सत्संग का अमृतपान करती रही। मेघ गगन में गूंजे एवं मूसलाधार बरसे... आत्मगगन के अनुभव में तन्मय

करनेवाले पूज्य बापू की योगवाणी सत्संग-भवन में गूंजे और बरसे... इस दृश्य का लाभ तो जिन्होंने अनुभव किया उन्होंने ही जाना। सत्संग चालू हो तब मेघराजा मधुर, मधुर... रिमझिम-रिमझिम बरसते हों... सत्संग के पूर्ण होते ही पूज्य बापू ने विनोदी भाषा में, आकाश की ओर हाथ उठाकर विनोदी संकेत करते हुए कहा : 'दे... दे...' और इसके बाद मेघराजा जो बरसे हैं मूसलाधार...! सत्संग के समय संयम और सत्संग पूर्ण होने पर मूसलाधार.. सभी भक्त इस स्थिति के आनंद का अनुभव करते और कीर्तन की मस्ती में झूमते हुए लम्बे समय तक पंडाल में खड़े रहे। शाम को चार बजे आये और रात के साढ़े आठ बजे।

पूज्य बापू ने आकाश की ओर संकेत करते हुए कहा :

"हे मेघराजा! अब इन लोगों को घर जाना है।" ऐसा कहकर शंखनाद किया। फिर तो कहना ही क्या! शंखनाद के साथ ही मेघराजा ने मानो ठोस ब्रेक लगा दी।

अजब अनोखी प्रतिभा... हरिरस की वर्षा करती हुई अमृतवाणी... जनता में श्रद्धा-भक्ति का अमृत उंडेलकर उसे भगवत् मार्ग की ओर ले जानेवाले इन लोकप्रिय संत की निराली लीला का किन शब्दों में वर्णन करें! किन पुष्पों से पूजा करें! किन नेत्रों से दर्शन करें! शब्द और दृष्टि कम पड़ते हैं। इन अलख के औलिया को... निःशब्द और अरूप में रमण करने वाले राम को हजार-हजार प्रणाम!!!

*

पूज्यश्री के आगामी सत्संग कार्यक्रम

सुरत में जन्माष्टमी महोत्सव

दिनांक : २१ अगस्त '९२. स्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहांगीरपुरा, सुरत।
फोन : ६८५३४१ (नया नंबर)

गांधीधाम (कच्छ) में दिव्य सत्संग समारोह

दिनांक : १७ सितम्बर '९२ दोपहर ३-३० से ५-३०. दिनांक : १८, १९, २०, २१ सितम्बर '९२ सुबह ९ से ११. दोपहर ३-३० से ५-३०. स्थान : रामलीला मैदान, टाउनहोल के पास, गांधीधाम (कच्छ).

राजकोट में वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर

दिनांक : २५ से २८ सितम्बर '९२.

पू. बापू का आत्म-साक्षात्कार दिन महोत्सव दिनांक २८ को मनाया जाएगा।

स्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम, कालावड़ रोड़, न्यारी डेम के पास, राजकोट।

मन्दसौर (म.प्र.) में दिव्य सत्संग समारोह

दिनांक : १ अक्तूबर, '९२ दोपहर ३-३० से ५-३०. दिनांक : २, ३, ४ अक्तूबर, '९२ सुबह ९ से ११. दोपहर ३-३० से ५-३०. स्थान : बालागंज स्कूल मैदान, काला खेत, मन्दसौर (म. प्र.)

इन्दौर में विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर

दिनांक : ६ से ८ अक्तूबर '९२

शरदपूर्णिमा महोत्सव एवं वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर

दिनांक : ९ से ११ अक्तूबर '९२. स्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम, खण्डवा रोड़, बिलावली तालाब के पास, इन्दौर। फोन : ६७४१८.

खण्डवा में दिव्य सत्संग समारोह

दिनांक : १३ से १६ अक्तूबर '९२ सुबह ९ से ११. दोपहर ३-३० से ५-३०. स्थान : नैमिषारण्य, भवानी माता रोड़, खण्डवा।

*

दीपावलि ग्रीटींग कार्ड एवं केलेन्डर

प्रत्येक वर्ष की तरह इस वर्ष भी दीपावलि के पर्व पर पूज्य बापू के अनोखे, आकर्षक, रंगीन फोटोग्राफ तथा जीवन-उद्धारक संदेशवाले दीपावलिकार्ड, फोल्डर, पोकेट केलेन्डर, वॉल केलेन्डर, पुस्तिका वगैरह प्रकाशित करने की जोरदार तैयारी चल रही है। अपने स्नेही, सम्बन्धी, मित्र और परिचितों को भेजने के लिए तथा ऋषिप्रसाद के रूप में भेंट देने के लिए जिन्हें यह साहित्य थोकबंद लेने की इच्छा हो, उन्हें उस साहित्य में अपना नाम, कंपनी का नाम वगैरह छपवाने की सुविधा दी जायेगी। कम से कम ५०० प्रतियों का ऑर्डर लिया जाता है।

Registered with Registrar of Newspapers for India Under No. 48873/91
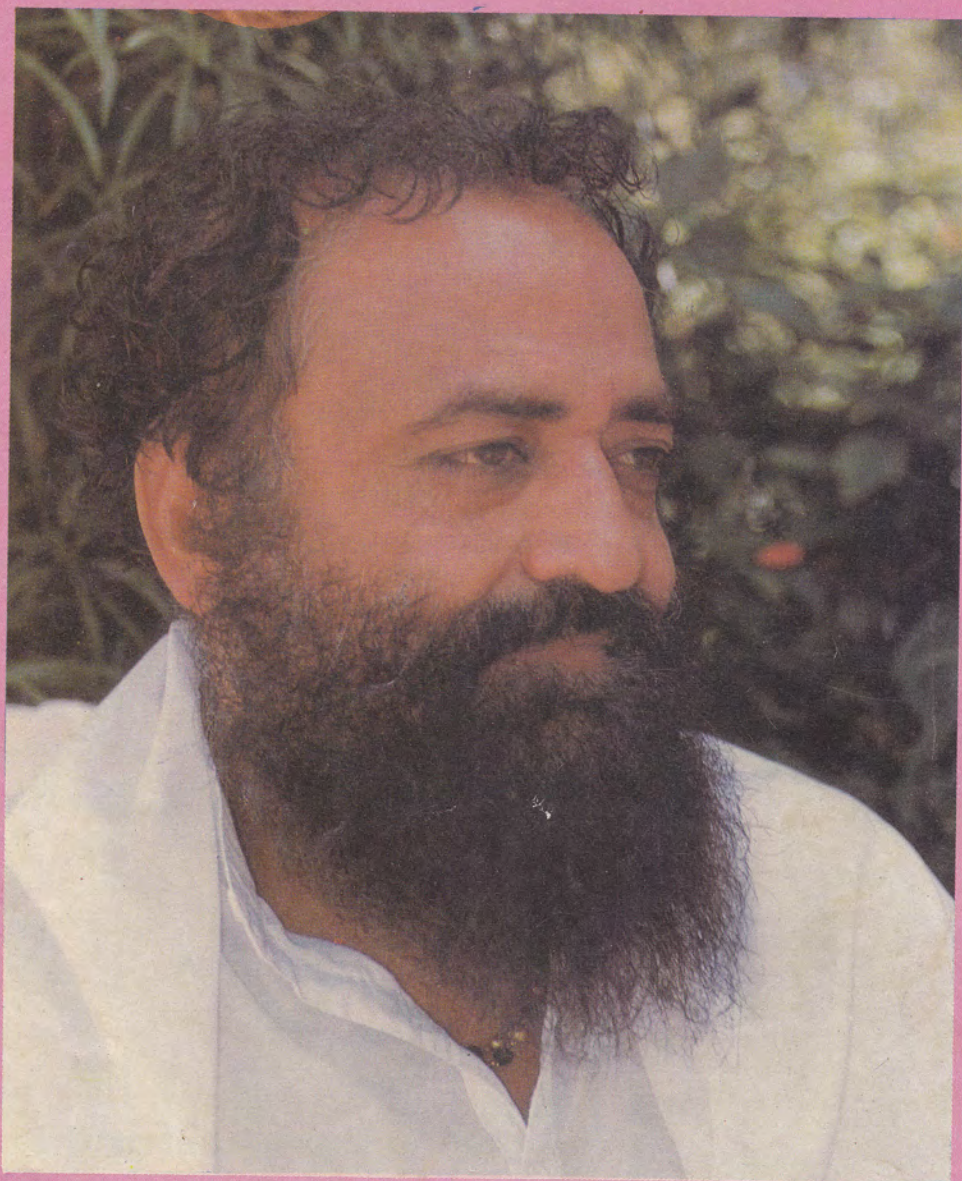
विचार करो : 'मेरे चित्त में अशान्ति या असन्तोष है, वह किस अभाव के कारण है ? क्या मैं अनेक प्रकार के अभावों से घिरा हुआ हूँ ? वह कौन-सी वस्तु है जिसके प्राप्त होने पर सारे अभाव पूर्ण हो जायेंगे ? निश्चय ही ऐसी वस्तु एकमात्र परमात्मा हैं । जब तक वे नहीं मिलेंगे तब तक इस जीवन के अभावों से छुटकारा कहाँ ? मैं तो परमात्मा को प्राप्त करके ही रहूँगा ।'

– पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू